।।ओ३म्।।

पाक्षिक

परोपकारी

• वर्ष ६० • अंक ९ • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र • मई (प्रथम) २०१८

महर्षि दयानन्द सरस्वती

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित आयुर्वेदिक चिकित्सालय, जिसके माध्यम से आमजन के लिए निःशुल्क चिकित्सा की व्यवस्था की जाती है।

चिकित्सक के रूप में वैद्य श्री रमेश मुनि वानप्रस्थी अपनी सेवाएँ देते हैं

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६० अंक : ०९

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: ज्येष्ठ कृष्ण २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,

केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.

त्रिवार्षिक-५८० रु.

आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.

एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर

द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर

त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर

आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.

एक प्रति - ३ पाउण्ड

एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२११७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

मई प्रथम २०१८

अनुक्रम

०१. सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर...	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-५	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. पाणिनिकाल एवं संस्कृत में द्विवचन	आ. उदयवीर शास्त्री	१६
०५. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२०
०६. मनोरञ्जक इतिहास पुस्तक...	श्रीनिवास राव	२१
०७. मैं आग्रही हूँ	तपेन्द्र वेदालङ्कार	२४
०८. आओ सुपथ पर चलें	प्रकाश चौधरी	३०
०९. पाठकों की प्रतिक्रिया		३२
१०. संस्था-समाचार		३५
११. श्री स्वामी भवानीदयाल संन्यासी	पं. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी	३६
१२. शङ्का समाधान- २४	डॉ. वेदपाल	४०
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर हंगामा!

२० मार्च, २०१८ को सर्वोच्च न्यायालय के दो न्यायाधीशों - माननीय आदर्श कुमार गोयल और उदय उमेश ललित की पीठ ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण अधिनियम १९८९) के संदर्भ में सोद्देश्यपूर्ण व्याख्या करते हुए यह निर्णय दिया था कि उक्त एक्ट के अधीन दर्ज कराए गए प्रकरणों में अग्रिम जमानत तो दी ही जा सकती है, साथ ही सरकारी कर्मचारी को गिरफ्तारी से पूर्व उसके नियोक्ता से तथा अन्य सामान्य जनों की गिरफ्तारी से पहले वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक की अनुमति लेकर ही गिरफ्तार किया जा सकता है। इस निर्णय के बाद भारत की विभिन्न राजनीतिक पार्टियों, अनुसूचित जाति, जनजाति संगठनों ने सुप्रीम कोर्ट के इस निर्णय के विरुद्ध तीखी प्रतिक्रिया करते हुए इसका विरोध किया। यही नहीं, केन्द्र में सत्तारूढ़ भारतीय जनता पार्टी के सांसदों एवं राज्यों में विधानसभा सदस्यों इत्यादि ने भी संतुलित एवं दबे स्वर में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध स्वर प्रकट किए हैं।

मुझे बहुत से आर्यजनों के फोन आए और उन्होंने इस घटनाक्रम के संबन्ध में विचार जानने चाहे कि आर्यसमाज इस निर्णय पर क्या कह सकता है। मुझे लगा कि आर्यसमाज, जो सर्वसमावेशी एवं समत्ववादी विचारधारा को मानवीय समानता के आधार पर स्वीकार करता है उसे इस प्रकार के संवैधानिक अधिकारों या विवादों के विषय में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश को किस प्रकार समझना चाहिए, इस पर थोड़ा विचार जरूरी है।

यह सत्य है कि राजनीतिक पार्टियाँ अनुसूचित जनजाति एवं अनुसूचित जाति को केवल एक वोट बैंक के रूप में ही स्वीकार करती आ रही हैं। अगर ऐसा नहीं हुआ होता तो क्या पं. जवाहरलाल नेहरू को डॉ. भीमराव अंबेडकर जैसे विद्वान् और संवैधानिक चिन्तक को दो-दो बार हराने के लिए कमर कसनी पड़ती? जबकि आजादी के बाद इतने वर्षों में हम समाज के इन वर्गों को क्या उनका मानवीय मूल अधिकार भी दे पाये हैं? सामाजिक विषमताओं के साथ-साथ आर्थिक और शैक्षिक विषमताओं ने आज उन्हें जिस स्थिति में ला छोड़ा है, उसी के कारण २ अप्रैल को भारत बंद की इस घटना ने झकझोर कर रख दिया है जिसके राजनीतिक मायने निकाले जा रहे हैं। स्वयंसेवी संगठन और राजनैतिक पार्टियां इस बंद के पीछे से किस प्रकार का खेल खेल रही थीं, यह किसी से छिपा हुआ नहीं है। मुझे बिहार के भभुआ के **डी.एस.पी. अजय प्रसाद** द्वारा फेसबुक पर दी गई टिप्पणी बहुत अधिक तार्किक, सामयिक और उद्वेलित करने वाली लगी। मैं चाहता हूँ कि आप सभी पंजाब केसरी समाचार पत्र में प्रकाशित उनके पत्र का धैर्यपूर्वक अवलोकन अवश्य करें और देखें कि देश किस ओर जा रहा है-

सबसे पहले दो तथ्य- (१) मैं अनुसूचित जाति से हूं..... (२) पुलिस विभाग में डी.एस.पी. हूँ...

दोनों तथ्य के बाद नीचे पूरा पढ़ लीजिएगा, तब आप चाहे दलित हों या (कथित) सवर्ण, जितना गाली देना होगा, दे दीजिएगा....क्योंकि आजकल सोशल मीडिया में fog कम, गाली ज्यादा चल रहा है......

१ अप्रैल की रात के ९ बजे बिहार के कैमूर जिले के भभुआ शहर के अनुसूचित जाति छात्रावास के करीब पंद्रह उत्साही लड़के और छात्र नेता (?) मिलने आए। उन्हें भारत बंद करना था। भारत न हुआ खिड़की हो गई। तेज हवा आ रही है, बंद कर दो। पहले लगा मूर्ख दिवस का मजाक कर रहे हैं, फिर उनका गंभीर चेहरा देखके हम भी गंभीर हो गए और पूछे। पूछने पर इन्होंने बताया कि कल जुलूस निकालना है। बिहार पुलिस एक्ट २००७ के अनुसार कोई भी जुलूस चाहे रामनवमी का हो या दुर्गा पूजा या मुहर्रम या राजनीतिक, आपको एक जुलूस लाइसेंस लेना होता है। जुलूस लाइसेंस डी.एस.पी. के पास से मिलता है। फ्री में मिलता है। बस एक आवेदन देना होता है। इनको नियम मालूम नहीं था, जो कि कोई बड़ी बात नहीं थी। इसलिए बताया गया। बताने के लिए ही बुलाया गया था।

अब बुलाया था, पानी पिलाकर मैंने पूछ लिया कि भाई कल और क्या-क्या करना है। बोले भारत बंद करना है। पूछे, क्या तकलीफ हो गई भारत से। एक स्वर में कहा एस.सी./एस.टी. एक्ट में जो हुआ है, उसके विरोध में निकालना है। एक बार और पूछा-हुआ क्या है? सब चुप। चार-पाँच बार पूछा कि पूरे भारत को बंद करने के लिए तैयार खड़े हो, पर किसलिए, यह तो बताओ। एक ने गला साफ कर बताया कि एससी/एसटी एक्ट में छेड़छाड़ हुआ है। एस.सी./एस.टी. एक्ट न हुआ, लड़की हो गई...।

खैर, बस जानकारी के लिए बता रहा हूँ...थोड़ा धैर्य रखकर पढ़ लीजिए, समझ लीजिए। डी.एस.पी. हूँ। अनुसूचित जाति से हूँ। इसलिए सुन लीजिए। उसके बाद खिड़की बंद करिए, भारत बंद करिए, दरवाजा बंद करिए, जो करना है करिए....पर करने से पहले बाबा साहेब ने कहा था उसको जरा याद रखिए और उस क्रम को याद रखिए - शिक्षित, आन्दोलित और संगठित (Educate, Agitate and Organise) करें। ये लोग भी शिक्षित होने के पहले ही आन्दोलित हो गए थे। ठीक वैसे ही जैसे हमारे समय कुछ ज्यादा तेज बच्चे क्लास फांद के सीधे दूसरे क्लास से चौथे में चले जाते थे। हम लोग तो एक ही क्लास में दो-दो साल लटकते थे।

माननीय सुप्रीम कोर्ट ने (संभवतः) कहा है....संभवतः शब्द इसलिए कि अभी आदेश की कॉपी नहीं मिली है। बस अखबारों में पढ़े न्यूज के आधार पर बता रहा हूँ, वैसे बाकियों के पास भी उससे ज्यादा जानकारी नहीं है-

१. एस.सी./एस.टी. एक्ट के तहत दर्ज मामलों में तुरन्त गिरफ्तारी नहीं होगी। इसके लिए एस.पी. का आदेश चाहिए। बाकी राज्यों का हाल नहीं पता, पर बिहार में तो पहले भी यही था। एस.सी./एस.टी. के तहत दर्ज प्राथमिकी में अनुसंधान आरम्भ होता है फिर डी.एस.पी. सुपरविजन करते हैं, जिसमें तय होता है कि साक्ष्य क्या है और उस मामले में गिरफ्तारी करना है। इसे सुपरविजन नोट कहते हैं। फिर एस.पी. रिपोर्ट-२ निकालते हैं....जिसमें सुपरविजन नोट पर अनुमोदन होता है। तब गिरफ्तारी होती है। तो बदला क्या बिहार के मामले में, कुछ नहीं?

२. दूसरा अग्रिम जमानत का प्रावधान नहीं था। अब कर दिया गया है। पहले बेल या जमानत को समझ लीजिए। जब किसी मामले में किसी को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया जाता है, तो वह जेल जाने के बाद जेल से बाहर आने के लिए कोर्ट में जमानत याचिका दायर करता है। इसे रेग्यूलर बेल कहते हैं। दूसरी स्थिति यह होती है कि आरोपी को जैसे ही पता चलता है कि उस पर कोई केस है, वह फरार हो जाता है और वकील के माध्यम से कोर्ट में बेल के लिए यह कहते हुए आवेदन देता है कि मुझे फँसाया जा रहा है। मुझे गिरफ्तारी से बचने के लिए बेल दिया जाए। अगर कोर्ट को यह लगता है कि सही में मामला ऐसा है तो अग्रिम जमानत ग्रांट कर सकता है। पर आप सभी की जानकारी के लिए वर्ष २०१५ से ही एस.सी./एस.टी. एक्ट के तहत दर्ज अधिकांश मामलों में (चूंकि सात वर्ष से कम की सजा है, इसलिए) बेल या जमानत की जरूरत ही नहीं पड़ती थी और थाने पर ही ४१ सीआरपीसी के तहत बांड पर छोड़ दिया जाता था। सो, प्रैक्टिकली बहुत अन्तर नहीं पड़ा है।

३. पहले किसी सरकारी अधिकारी के खिलाफ एस.सी./एस.टी. एक्ट के तहत केस दर्ज होने पर तब तक उसे गिरफ्तार नहीं किया जाएगा जब तक कि उसे नियुक्त करने वाले प्राधिकारी से अनुमति न मिले। सी.आर.पी.सी. की धारा १९७ के अनुसार पहले से ही यह प्रावधान है कि किसी लोकसेवक के विरुद्ध न्यायालय में किसी भी मामले में तब तक संज्ञान नहीं लिया जाएगा जब तक कि उसे नियुक्त करने वाले प्राधिकारी का अनुमोदन प्राप्त नहीं हो। इसमें मुझे तो कुछ भी गलत नहीं लगता क्योंकि अपने छोटे से सर्विस पीरियड में मैंने देखा है कि भारी पैमाने पर कथित उच्च जाति के पदाधिकारियों को अनुसूचित जाति के कर्मी इस एक्ट का इस्तेमाल अपने विरोधी कथित सवर्ण पदाधिकारी को दबाने में करते हैं।

अब माननीय सुप्रीम कोर्ट के निर्णय से थोड़ा हट

कर-

दुरुपयोग हर कानून और धारा का होता है। मैंने आज तक सबसे ज्यादा दुरुपयोग किसी धारा का देखा है, तो वो है चोरी की धारा ३७९, जो लोग कोर्ट-कचहरी-पुलिस से जुड़े हैं, जानते हैं कि मारपीट की हर एफ.आई.आर. की अन्तिम लाइन यह जरूर होती है...मेरे गले से सोने की चेन छीन ली। भले ही घर में खाने को पैसा नहीं हो पर इस देश में हर पिटे हुए व्यक्ति के गले में सोने की चेन जरूर होती है। यह लाइन सिर्फ इसलिए हर प्राथमिकी में लोग जोड़ते हैं, या वकील भाई साहब लोग जुड़वाते हैं ताकि चोरी की धारा लगे।

कल रात जिन्हें जुलूस लाइसेंस देने बुलाया था, आज उनके बुलावे पर 'शांतिपूर्ण प्रदर्शन' करने आए साथियों ने जमकर बवाल काटा। लाठी-डंडा लेकर पूरे भभुआ शहर में घूम-घूम कर बवाल काटा। गाड़ियाँ तोड़ीं, शीशे फोड़े, दुकानें लूटीं। कल दस बार समझाया था कि भीड़ इकट्ठी करना आसान है, उसे नियन्त्रित करना लगभग असंभव है। कल जिनको पानी पिलाया था, आज उन पर प्राथमिकी दर्ज करवा रहा हूँ। सुना है कि सभी हॉस्टल छोड़कर फरार हैं। आज जहां भी फरार होंगे, मेरी कल की बात को जरूर याद कर रहे होंगे....क्योंकि जब उन्होंने अपने सहयोगियों को रोकने की कोशिश की तो खुद ही उनसे ही पिटते-पिटते बचे...कल मैंने कहा था, बार-बार कहा था कि भीड़ उतनी ही इकट्ठी करना जितने को संभाल सको।

रात ग्यारह बजे एक बड़ी पार्टी के नेता ने फोन किया। पहले माननीय रह चुके हैं....बहुत सारे लोगों के नाम के आगे माननीय नहीं लगाने पर रूठ जाते हैं। पूछा, आज जो केस हो रहा है, तोड़-फोड़ वाला, उसमें मेरा नाम है, या नहीं? मैंने कहा कि आप तो वहाँ दिखे नहीं, सो आपका नाम क्यों रहेगा? मैंने सोचा सुनकर भूतपूर्व माननीय खुश होंगे कि चलो बेकार में फंसे नहीं....पर हुआ उल्टा। बताने लगे कि नहीं हम तो फलाना चौक पर पुरकस विरोध किए हैं। आपको हम दिखे कैसे नहीं। फिर बोले, केस में देखिएगा....मेरा भी नाम रहेगा तो ठीक रहेगा। मैंने पूछा काहे ठीक रहेगा? तो बोले अरे नाम हो जाएगा। दलित वोट में फायदा होगा....।

पहले सोचे कि फोन को अपने सर पर पटक लें लेकिन विचार बदले। अपना सर अलग पटके, फ़ोन अलग पटके....।

फिर कहता हूँ....बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर ने कहा था-**शिक्षित, आन्दोलित और संगठित** इस क्रम को याद रखिए....अगर आगे बढ़ना है तो, खुद को तमाशा नहीं बनवाना है तो क्रम को याद रखिए...। **(राष्ट्रीय सहारा हस्तक्षेप से साभार)**

पुलिस अधिकारी की यह आपबीती कथा बता रही है कि संवेदनशील मुद्दों पर भी राजनीतिक पार्टियाँ कैसा खेल खेलती हैं। बिना समझे या लालचग्रस्त होकर देश की सम्पत्ति को नष्ट कर देने वाला भीड़-तन्त्र सूचनाओं के विशाल भंडार के युग में आज भी सक्रिय है। क्या सामाजिक समरसता, समानता और समष्टिगत विवेक को जाग्रत करने वाले एक सुदृढ़ सामाजिक आन्दोलन की आज और अधिक आवश्यकता नहीं है? राजनीति को वेश्या के समान यूँ ही नहीं कहा गया है, वह तो स्वार्थ हेतु कुछ भी कर सकती है, परन्तु लोकचेतना को जगाना परोपकारी, सामाजिक पुरुषों का काम है। अन्यथा, ये विभिन्न राजनीतिक दल सत्ता के लालच में देश को पुनः परतन्त्रता की ओर ले जा सकते हैं, हमारे पुरुषार्थी पुरखों के परिश्रम को नष्ट कर सकते हैं। अतः श्रेष्ठ-सचेत पुरुषों को सामाजिक जागरण का कार्य और अधिक निष्ठा एवं परिश्रम से करना होगा, अन्यथा सब-कुछ के साथ राष्ट्र नष्ट होगा-

मज्जेत् त्रयी दण्डनीतौ हतायाम्।
सर्वे धर्मा न भवेयुर्विरुद्धाः।।

दिनेश

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

मृत्यु सूक्त-५

प्रवचनकर्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान्।।

इस वेद ज्ञान की चर्चा में ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १८ वें सूक्त की चर्चा कर रहे हैं। इसका ऋषि 'सङ्कुसुको यामायन:' है, और इसका देवता 'मृत्यु' है। इसमें प्रार्थना की गई है कि हम मृत्यु से बचें और देवयान मार्ग की ओर जायें। पिछली चर्चा में हमने आपको एक बात बताई थी कि हम यह समझते हैं कि देवयान मार्ग से मृत्यु नहीं होगी, तो ऐसा लगता है जैसे फिर ये शरीर हमारा बना ही रहेगा, फिर हमारी मृत्यु ही नहीं होगी, क्योंकि देवयान मार्ग की पहचान है कि वो मृत्यु से बच जाता है और पितृयाण मार्ग में मृत्यु होती है। इसका मतलब हुआ कि यदि हम पितृयाण मार्ग के अनुयायी हैं, दुनियादारी के अनुयायी हैं तो संसार छूट जाएगा और फिर से मिल जाएगा, लेकिन देवयान मार्ग में शायद संसार छूटेगा ही नहीं। वास्तव में ऐसा नहीं है। मन्त्र कहता है-**'इतरो देवयानात्'**- हे मृत्यु! तेरा जो रास्ता है, पंथा है, वो देवयान से भिन्न है, तो हम इस शरीर में यदि देवयान के अनुयायी हो जाएं तो क्या हम मरने से बच जायेंगे? कहता है, यह तो हो नहीं सकता, क्योंकि जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु अवश्य होगी। जो बना है वो बिगड़ेगा, उत्पन्न हुआ है तो नष्ट होगा। फिर देवयान का लाभ क्या हुआ? मृत्यु **इस शरीर की** पितृयाण मार्ग वाले की भी है और मृत्यु **इस शरीर की** देवयान मार्ग वाले की भी है। अन्तर ये है कि इस शरीर से छूटने के बाद फिर शरीर को प्राप्त करना, अर्थात् फिर मृत्यु के लिए तैयार रहना, यह पितृयाण मार्ग है और शरीर छूटने के पश्चात् जन्म-मृत्यु के चक्र से छूट जाना, यह देवयान मार्ग है।

पिछले एक सन्दर्भ में हमने चर्चा की थी कि यज्ञ पितृयाण मार्ग का कार्य है लेकिन उससे भी रोचक बात है कि यही यज्ञ देवयान मार्ग का भी कारण है। **वेदान्त दर्शन** में एक बड़ा रोचक प्रसंग उठाया है-वहाँ कहा गया है कि मुक्ति ज्ञान के मार्ग से होती है, ज्ञानी को होती है। **'ज्ञानात् मुक्तिः'**, मुक्ति कर्म से नहीं होती। लेकिन फिर कहा कि अग्निहोत्र करो, यह तो कर्म है और अग्निहोत्र रूप कर्म करने वाला, अच्छे कर्म करने पर भी कभी मुक्त नहीं हो सकेगा, क्योंकि मुक्ति ज्ञान मार्ग से होती है, कर्म मार्ग से होगी ही नहीं। यह एक भ्रम मध्यकाल में विद्वानों से जन सामान्य तक फैला। कभी-कभी हम किसी चीज़ को मान लेते हैं तो फिर बौद्धिकता हमारी काम नहीं करती। वैसे ही एक शब्द हमने मान लिया कि **ज्ञान से मुक्ति होती है, तो ये मान लिया कि कर्म से मुक्ति नहीं होती। ये अज्ञान है, नासमझी है। क्योंकि कर्म बिना ज्ञान के हो ही नहीं सकता और ज्ञान की प्राप्ति बिना कर्म के संभव नहीं है।** इसलिए जिस किसी ने भी यह कहा है, उसने क्या सोचकर कहा है, उस सोच तक हम नहीं जाते। इसलिए ज्ञान अनिवार्य है, लेकिन ज्ञान की प्राप्ति कर्म से ही संभव है। इसी प्रकार अग्निहोत्र कर्म है, लेकिन ज्ञानपूर्वक किया गया।

शास्त्र कहता है कि अग्निहोत्र सामान्य रूप से संसार का सुख देने वाला है-चाहे वह पर्यावरण का सुख दे, मानसिक संतुष्टि का सुख दे, स्वर्ग (सुविधाओं) का सुख दे, लेकिन यही अग्निहोत्र क्या मुक्ति को देने वाला नहीं होगा? ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि जो अच्छा रास्ता है, वो सदा अच्छे की ओर ही जाता है। कम अच्छा रास्ता अलग जाएगा और ज्यादा अच्छा रास्ता दूसरी दिशा में जाएगा, ऐसा नहीं है। 'अच्छा' शब्द सापेक्ष है। छोटा, बड़े की तुलना में पहले है और बड़ा उसके बाद है। यह नहीं हो सकता कि छोटे तक पहुंचकर बड़े तक नहीं पहुँचा जा सकता, या बड़ा मिले ही नहीं। रास्ता चाहे छोटा है या बड़ा है, यदि प्रयोजन एक है तो रास्ता भी एक ही होगा। अच्छा प्रयोजन यदि छोटा है तो वह उसी रास्ते पर पहले मिल जाएगा और बड़ा प्रयोजन दूर है इसलिये देर से मिलेगा। जैसे एक ही रास्ते पर मिलने वाले गाँव कोई १० किमी. पर मिलता है, कोई १०० पर, कोई हजार किमी. पर। लेकिन मुख्य को छोड़कर

विपरीत दिशा में जाने से वही गाँव नहीं मिलते। वैसे ही यदि **यज्ञ अच्छा काम है तो वो मुक्ति का विरोधी इसलिए नहीं हो सकता क्योंकि सारी अच्छाई की दिशा एक होती है। जो काम बड़े, अच्छे लक्ष्य की ओर ले जा रहा है, वो हर काम अच्छा है। मेरा प्रत्येक जो कदम है, पग है, वो पहला है तो भी अच्छा है और अन्तिम है तो भी अच्छा है। पहले के बिना अन्तिम चला ही नहीं जा सकता। इसलिए हर छोटी अच्छाई से बड़ी अच्छाई पैदा होती है।** बड़ी अच्छाई में और छोटी अच्छाई में कभी विरोध नहीं हो सकता। इसलिए यह कहना कि अच्छे काम से मुक्ति नहीं मिलेगी, केवल ज्ञान से मिलेगी, यह मिथ्या है। वहाँ दर्शनकार एक बात कहते हैं कि अग्निहोत्र से मुक्ति अवश्य होगी, अन्तर इतना ही है कि जब आप उस काम को ज्ञानपूर्वक करेंगे।

ज्ञानपूर्वक कैसे करेंगे? जब पूर्ण ज्ञान हो जाता है तो मनुष्य उस कार्य के फल के बारे में ना तो चिन्तित होता है, न इच्छा करता है। कल सूरज निकलेगा, इसकी मुझे चिन्ता नहीं है, मुझे तो केवल रात को सोना है, सवेरे जब उठूँगा तो अपने आप सूरज निकला हुआ मिलेगा। तो जब मैं कर्म करूँगा, उसका फल उतना ही स्वाभाविक और सहज मिलेगा, जैसा भी करूँ, वैसा ही मिलेगा। जिस क्षण मुझे यह ध्यान आ जाता है कि यह तो होना ही है, तो उसके अन्दर मेरी आसक्ति समाप्त हो जाती है। मैं रातभर यह सोचूँ कि सूरज निकले, निकले, निकले-तो मैं दु:खी तो हो सकता हूँ लेकिन सूरज के निकलने, न निकलने को प्रभावित नहीं कर सकता। वैसे ही अग्निहोत्र को जब मैं इच्छापूर्वक करता हूँ, फल चाहकर करता हूँ, तो मैं अपने को बन्धन में डालता हूँ, अपने को उससे जोड़ता हूँ। लेकिन उस अग्निहोत्र को जब मैं फल की कामना लिये बिना करता हूँ, क्योंकि उसका फल तो मिलना ही है, तो वो परिस्थिति निष्काम कर्म की कहलाती है। यह निष्काम कर्म ही मुझे देवयान के मार्ग पर ले जाता है, देवताओं के मार्ग पर ले जाता है, क्योंकि वहाँ चिन्ता मेरा विषय नहीं रहता है, वहाँ चिन्ता व्यवस्था करने वाले का विषय रहता है।

ईश्वर का विषय रहता है, परमात्मा का विषय रहता है। इस दृष्टि से पितृयाण और देवयान मार्ग में विरोध नहीं है। जो लोग इनमें विरोध मानते हैं, वे चोरी, डकैती, बलात्कार, दुराचार, झूठ इनका क्या करेंगे? यज्ञ करना, सच बोलना, परोपकार करना, दान देना, क्या ये भी उसी श्रेणी में आ जायेंगे? ऐसा नहीं है। ये हैं उसी मुक्ति के मार्ग का हिस्सा, लेकिन ये प्रथम है और वो बाद में है। ''**तप:श्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये शान्ता विद्वांसो भैक्ष्यचर्यां चरन्त: सूर्यद्वारेण ते विरजा: प्रयान्ति यत्रामृत: स पुरुषो ह्यव्ययात्मा**'' कहता है कि जो लोग इष्ट और आपूर्त अर्थात् यज्ञ और कर्मकाण्ड में रहते हैं, जो उनसे कुछ आगे निकल गए हैं वो '**तप:श्रद्धे ह्युपवसन्त्यरण्ये**' अरण्य में जाते हैं, तप करते हैं, श्रद्धा रखते हैं, ज्ञान रखते हैं। '**शान्ता विद्वांसो भैक्ष्यचर्याम् चरन्त:**'-वो विद्वान् शान्त होकर के, भिक्षा की याचना करते हुए जीवन का यापन करते हैं। वो उस सूर्य के द्वारा सभी जो संसार हैं, उनके दु:खों से छूट करके, उस अव्यय ब्रह्म को, अमृत को प्राप्त होते हैं। इसमें कभी मरने का, बदलने का, परिवर्तन का, विनाश का भाव नहीं आता है।

इसलिए यहाँ जो अन्तर समझाया है वो अन्तर मूल रूप से इतना ही है कि एक अच्छे का प्रयत्न है और एक अधिक अच्छे का प्रयत्न है और उन दोनों का अन्तर ही सकाम या निष्काम कर्म का भाव है। अच्छा काम, काम है लेकिन फल की भावना से है। अच्छा तो है, लेकिन फल के प्रयोजन से है। प्रयोजन सिद्ध भी हो सकता है सिद्ध नहीं भी हो सकता है, क्यों? प्रयोजन हम अपने अनुकूल बताना चाहते हैं, करना चाहते हैं। वो कम होता है, अधिक होता है, नहीं होता है तो उसमें मेरी इच्छा का व्याघात हो जाता है, मेरी इच्छा खंडित हो जाती है, हो सकती है, उसके अन्दर मुझे भय पैदा हो सकता है। कहीं ऐसा न हो कि यह काम पूरा न हो, कहीं ऐसा न हो कि काम करने के बाद इसका उचित फल मुझे न मिले। ये परिस्थिति मेरी कैसे समाप्त हो? तो मन्त्र कहता है कि मृत्यु इस परिस्थिति से जुड़ी हुई चीज है।

ऋषि दयानन्द ने लिखा है-आत्मा का स्वाभाविक गुण है कि वो शुद्ध है, बुद्ध है, नित्य है, पवित्र है, तो फिर वह संसार में फँसता क्यों है? वो संसार में आता क्यों है? इसमें उलझता क्यों है? तो वो कहते हैं, स्वभाव से तो वो ठीक है, शुद्ध, पवित्र है, अपरिवर्तनीय है, लेकिन वो इस संसार में जब आता है, तो भौतिक शरीर से उसका मेल

होता है। जिसको हम बुद्धि कहते हैं, जिसको मन कहते हैं, जिसको इन्द्रियाँ कहते हैं, ये हैं तो भौतिक किन्तु इनकी सूक्ष्मता शरीर के अन्दर स्थित आत्मा को प्रतिबिम्बित भाव से प्रभावित करती है। इसके संपर्क में आने से जीवात्मा इनमें चैतन्य का, अपनेपन का अनुभव करता है और ये जड़ होने पर भी चेतन का अनुभव करते हैं। जैसे यह शरीर, इसको हम चेतन मानकर बात करते हैं, इसमें सुख-दु:ख का अनुभव मानकर बात करते हैं। इसके चोट लगने पर, इसको भोजन कराने पर अच्छे-बुरे का अनुभव होता है। जो भूख है, प्यास है, गर्मी है, सर्दी है सब शरीर को ही लगती है। जड़ शरीर में, चेतन का जो अनुभव काम कर रहा है, वैसे ही हमारा जो सूक्ष्म शरीर है उसमें भी चेतना ने चेतनता का भाव पैदा किया हुआ है। जैसे यह स्थूल जड़ शरीर, चेतनता के भाव के कारण चेतन होता हुआ दिखाई देता है, वैसे ही मेरे सूक्ष्म शरीर में भी आत्मा के निकट होने से चेतन का भाव दिखाई देता है और मूल रूप से तो समझने की बात इतनी सी है कि आत्मा सूक्ष्म शरीर के माध्यम से ही स्थूल शरीर को चैतन्ययुक्त कर रहा है। वो इस शरीर में भी व्याप्त होकर रहता है। जो सूक्ष्म शरीर न हो तो आत्मा इस शरीर को कैसे नियन्त्रित करेगा, इसके अन्दर चेतना का विस्तार कैसे करेगा? जब एक स्थूल शरीर चेतन प्रतीत होता है, तो सूक्ष्म शरीर भी तो चेतन प्रतीत हो रहा है। मेरी जो प्रतीत होने वाली चेतनता है, वो मुझे अपने वास्तविक चैतन्य से भिन्न नहीं दिख रही है। मैं आत्मा को और बुद्धि को एक मान रहा हूँ और इसके कारण से इस बुद्धि को ही सुख-दु:ख होने से, उसके नाते मैं अपने को सुखी और दु:खी समझता हूँ। ये बात यदि हमारी समझ में आ जाए कि जैसे स्थूल शरीर सूक्ष्म शरीर के निकल जाने से चेतना रहित हो जाता है, वैसे ही जीवात्मा के हट जाने से सूक्ष्म शरीर भी व्यर्थ हो जाता है, हो सकता है। जब तक इस शरीर से जुड़े तो यह संसार का बंधन इसके साथ जुड़ा हुआ है। यह स्थूल शरीर है, इसे कोई बाँध सकता है, इसे कोई रोक सकता है, इसको कोई पीड़ा दे सकता है। लेकिन यदि यह मर गया तो इसको पीड़ा देने से, इसको बन्धन में डालने से, इसको कष्ट देने से आत्मा को कोई कष्ट नहीं होता। उसी प्रकार सूक्ष्म शरीर को भी जब हम आत्मा से बिल्कुल अलग कर लेते हैं तब मन, बुद्धि, चित्त में भी होने वाला कोई कष्ट आत्मा को नहीं होता। यही वास्तविकता समझने की आवश्यकता है।

व्याकरण एवं दर्शन के अध्ययन हेतु प्रवेश प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी **परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर** में पिछले १८ वर्षों से प्रारम्भिक संस्कृत ज्ञान, पाणिनीय व्याकरण और दर्शनों के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। अत: व्याकरण एवं दर्शन पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षायें भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों के लिए निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क रहेगी। प्रवेश लेने वाले ब्रह्मचारियों के लिए निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं-

- आयु न्यूनतम १६ वर्ष हो।
- न्यूनतम १०वीं कक्षा पढ़े हुए विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।
- गुरुकुल के अनुशासन का पालन करना अनिवार्य होगा।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

स्वामी विष्वङ् परिव्राजक - ९४१४००३७५६

समय- ९:००-१०:००प्रात:, १२:३०-१:३० मध्याह्न

पता- महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (राज.) ३०५००१

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

श्री मुंशी प्रेमचन्द और आर्यसमाज- देश भर से आर्यसमाज तथा आर्य विचारधारा के विरुद्ध निराधार दुर्भावनापूर्ण प्रचार का प्रतिकार करने के लिये आर्यों के चलभाष मिलते हैं। आर्यमात्र की इस दृष्टि से सब आशायें 'परोपकारी' पर केन्द्रित हैं। श्री धर्मवीर जी द्वारा छेड़ा गया धर्मरक्षा अभियान परोपकारी पाक्षिक के विद्वान् यथापूर्व सोत्साह चलायेंगे। अभी-अभी आर्य विद्वान् गुणग्राहक जी ने सूचना दी है कि मार्क्सवादी कामरेड प्रेमचन्द जी को आर्यसमाजी नहीं मार्क्सवादी सिद्ध करने पर तुले हैं।

मैंने '**आपका चित्र**' पुस्तक के अपने प्राक्कथन में इस मिथ्या मत का सप्रमाण प्रतिवाद कर ही दिया था तथापि दुराग्रही टोली, जिन्हें आर्यसमाज से द्वेष है, उनकी रट अब भी वही है, सो इस विषय में कुछ और तथ्य देकर सत्यासत्य का निर्णय किया जाता है।

१. साम्यवादियों की तब भी कई पत्रिकायें निकलती थीं। जिस भी ऐसी पत्रिका के लिये प्रेमचन्द जी लिखते थे उसका नाम बताया जावे। क्या लिखा यह भी जानकारी देने की हिम्मत दिखाई जावे।

२. आर्यसामाजिक पत्रों में प्रेमचन्द जी की कहानियाँ यदा-कदा छपती ही रहती थीं। वे 'प्रकाश' साप्ताहिक जैसे प्रतिष्ठित आर्य-पत्र के एक माननीय लेखक थे। महाशय कृष्ण जी के 'दैनिक प्रताप' के भी वे लेखक थे। विषय आर्यसमाज के सिद्धान्तों को सामने रखकर चुने जाते थे।

३. आर्य दार्शनिक पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय के वे सहपाठी थे। इस महान् दार्शनिक के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अद्वैतवाद' को प्रेमचन्द जी की प्रेरणा से ही पहले लेखमाला के रूप में 'माधुरी' के कुछ अंकों में दिया गया।

४.आर्यसमाज की देश व समाज के प्रति सेवाओं की समय-समय पर आर्य सम्मेलनों में आपने भूरि-भूरि प्रशंसा की। वे आर्यसमाज के सभासद् भी रहे। प्रजातन्त्र में मतभेद तो सम्भव है। मुंशी जी का आर्यसमाज से कभी मनभेद तो नहीं रहा।

५. उनके देहाती अफ़सानों में शाकाहार के प्रचार, दलितोद्धार, फलित ज्योतिष के अन्धविश्वास पर विशुद्ध आर्यसमाजी दृष्टिकोण की कहानियाँ मिलती हैं।

६. पंजाब विश्वविद्यालय से एक शोधार्थी ने पीएच.डी. के शोध प्रबन्ध में उन पर आर्यसमाज के रंग को लेकर ही शोध किया है।

७. प्रेमचन्द्र जी की महर्षि दयानन्द पर कहानी पढ़कर उनकी ऋषि-भक्ति से कामरेडों को ईर्ष्या क्यों है?

'कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर' के प्रकाशन का यज्ञ- परोपकारिणी सभा को तो पं. लेखराम की ग्रन्थावली (कुल्लियात) के नये संस्करण के प्रकाशन की उत्सुकता का होना स्वाभाविक ही है। परोपकारी के पाठकों को व आर्य जनता को सभा के मन्त्री जी से भी अधिक इस कार्य में रुचि है। यह शुभ लक्षण है। आर्य मात्र को हम शुभ सूचना व बधाई देते हैं कि इस अंक के छपने तक सम्पादन का कार्य पूरा करके व पहले प्रूफ़ को पढ़कर इसके पहले भाग को महेन्द्र जी के पास भेजा जा चुका समझें। खोजपूर्ण सामग्री व प्रमाणों से परिपूर्ण इस ग्रन्थ के सम्पादन व पाद टिप्पणियों में हमने भी मौलिक युक्तियों, ठोस सामग्री व नये-नये प्रमाणों को देने में कोई कमी नहीं छोड़ी। दूसरे प्रूफ़ को पढ़ते समय एक-एक पृष्ठ पर उपशीर्षक देकर ग्रन्थ की गरिमा को और गौरवपूर्ण बना दिया जावेगा। पण्डित जी के साहित्य व बलिदान की महत्ता पर बड़े-बड़े मौलवियों, देश-विदेश के विद्वानों और इतिहासकार पं. भगवद्दत्त जी के विचार पढ़कर धर्मप्रेमी, देशप्रेमी जनता फड़क उठेगी।

गोरे ईसाइयों द्वारा संसार के विभिन्न देशों में नरसंहार करने की निडरतापूर्वक निन्दा करने वाला भारतीय विद्वान् पं. लेखराम इतिहासकारों द्वारा उपेक्षित रहा। इतिहासकार पं. लेखराम के इस रूप को पहली बार ही जानेंगे। किसी ने आर्यसमाज के इस निर्माता के जीवन के इस पक्ष को कभी मुखरित ही नहीं किया। इसे Highlight (मुखरित) करने का गौरव अब १२५ वर्ष पश्चात् परोपकारिणी सभा को प्राप्त हो रहा है।

भारतीय स्वराज्य संग्राम में गोरों द्वारा निर्दोष भारतीयों की अकारण हत्यायें करने की घटनाओं की भी महर्षि के पश्चात् केवल पं. लेखराम ने ही कुल्लियात में निन्दा की। देशभर के सुधारक व लीडर इस पर चुप्पी साधे रहे।

मूर्तियों का अपमान और विवाद- ईश्वरेतर पूजा का रोग तो कई मत पंथों में है, परन्तु हिन्दुओं में तो वेद विरुद्ध

जड़-पूजा, पेड़-पूजा, मूर्ति-पूजा, मृतक-पूजा, समाधि-पूजा की अति है। भारतमाता का मानचित्र बनाकर उसकी पूजा का नया कर्मकाण्ड चल पड़ा है। हमने परोपकारी में लिखा था कि महापुरुषों की मूर्तियाँ स्थापित करने की प्रतिस्पर्धा हो रही है। यत्र-तत्र मूर्तियों को खण्डित करने वाले उनका अपमान करते हैं, फिर दंगे होते हैं। यह चिन्ता का विषय है, परन्तु सुनता कौन है? इन्हीं दिनों श्री डॉ. अम्बेडकर, महात्मा गाँधी, डॉ. मुखर्जी जी की प्रतिमाओं का निरादर करने वालों के कुकृत्य पर देश के भले लोग रक्तरोदन करते हैं। मूर्तियाँ स्थापित करने से देशभक्ति की लहर तो उत्पन्न होने से रही। महापुरुषों के अनुकरण से ही जन-जन का व देश का भला होगा।

कभी डॉ. ईश्वरीप्रसाद इतिहासकार ने लिखा था कि हिन्दुओं ने मन्दिरों की मूर्तियों को आभूषणों, रत्नों व हीरों से अलंकृत करके उनकी रक्षा की तो व्यवस्था न की, उल्टा लुटेरे आक्रमणकारियों को देश पर आक्रमण करने का प्रलोभन दिया।

अब भी लीडरों को अंगरक्षक चाहिये। देश की सीमाओं की रक्षा के लिये सेना चाहिये। कानून-व्यवस्था व राष्ट्रीय सम्पत्ति की रक्षा के लिये सेना चाहिये और भगवानों व महापुरुषों की मूर्तियों के लिये भी अंगरक्षक जवान चाहिये। देश कैसे आगे बढ़ेगा।

नेहरू वंश की भयंकर भूल से- सत्ता की भूख भी एक महारोग है। नेहरू जी ने सरदार पटेल को देश का प्रधानमन्त्री न बनने दिया और इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा इन्दिरा जी का चुनाव निरस्त होने पर देश पर आपातकाल थोप दिया गया। बाबू जगजीवनराम जी को तब प्रधानमन्त्री बनने का अवसर दिया जाता तो आज देश के सामने दलित-अदलित की समस्या तथा वैमनस्य न होता।

बंगलादेश के बनाने पर नेहरू जी की पुत्री ने रक्षामन्त्री बाबू जगजीवन राम को भारतरत्न देने की उदारता न दिखाई। स्वयं ही भारत रत्न की उपाधि ले ली। आज राहुल दलितों के नाम पर पाँच घण्टे का उपवास कर रहे हैं। हमारा राजनीति से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं। राहुल प्रतिदिन ऐसे उपवास करते रहें। इससे News (समाचार) भी बनेगी और राहुल जी के स्वास्थ्य पर सुखद प्रभाव पड़ेगा। वंशवाद को भी तो सम्भव है कुछ लाभ हो।

संघ की भाषा- संघ प्रमुख भागवत जी समय-समय पर देश की राजनीति पर अपने भाषण देते रहते हैं। इन दिनों आपने 'कांग्रेस मुक्त भारत' के सरकारी भाषणों पर यह कहकर करारी चोट मारी कि यह संघ की भाषा नहीं। उन्होंने जो कहा, हमें उस पर कुछ भी आपत्ति नहीं। वंशवाद का विरोध एक बात है और किसी दल का विरोध दूसरी बात है। पाँच वर्ष से यह रागिनी देश सुन रहा था। चार वर्ष तो मोदी राज के बीत गये। सरकार के मन्त्री, सन्तरी, शाह जी जैसे नेता और भाजपा के टी.वी. प्रवक्ता (जो सब संघ के ही भूतपूर्व प्रचारक या सेवक हैं) एक ही स्वर में बोलते रहे। जब पानी सिर के ऊपर से निकल गया तब श्रीयुत् भागवत जी ने भाजपा की खिंचाई करके यह तराना बन्द कराया। काश कि वह चार वर्ष पूर्व यह उपदेश देते। हम भागवत जी से सहमत हैं कि सद्भावना को बढ़ाने में देश का भला है। सभी राजनीतिक दल परस्पर विद्वेष ही बढ़ा रहे हैं। यह देश के लिये हितकर नहीं। हर पार्टी दूसरे दल को कोसने में किसी से पीछे नहीं रहना चाहती।

अल्लाह और आत्मायें पैदा करेगा- कुल्लियात का सम्पादन करते हुये 'पुनर्जन्म मीमांसा' पं. लेखराम जी के एक मौलिक ग्रन्थ की पाद टिप्पणी में अपनी बी.ए. की Persian (फ़ारसी) की पुस्तक में पढ़ी हुई इस्लाम की एक शिक्षा को देने का ध्यान आ गया। 'अख़लाक जलाली' शीर्षक के उस लम्बे अध्याय की समाप्ति पर दिये गये सन्देश, उपदेश और आदेश को समझने से ही एक मोमिन, एक नमाजी इस्लामी दर्शन को पचा सकता है। मेरे कॉलेज के दिनों की वह पुस्तक इस समय मेरे सामने है। इसकी समाप्ति पर कहा गया है, "अगर शुमा गुनाह नकुनेद" यदि आप दुष्कर्म-पापकर्म नहीं करेंगे तो अल्लाह ताला आप सबका विनाश कर नई आत्मायें उत्पन्न करेगा ताकि वे खोटे कर्म करें। ईश्वर दया करके उनको क्षमा करेगा। ऐसे करने से ही उसकी दया व क्षमाशीलता का प्रकाश हो सकेगा। यही बात एक उर्दू कवि ने कही है कि कियामत के दिन मैं अल्लाह से कहूँगा, "हाँ! हाँ! गुनाह किये हैं तेरी रहमत के ज़ोर पर"। ऐसे ही अन्य-अन्य मुस्लिम विचारकों के बहुत कथन पं. लेखराम जी ने कुल्लियात में पुनर्जन्म मीमांसा पुस्तक में दिये हैं।

कुछ इधर की, कुछ उधर की- एक साथ कई विचार इस उपशीर्षक के अन्तर्गत देने पड़ गये हैं। माँग अधिक है, पृष्ठ संख्या का ध्यान करके थोड़ा-थोड़ा ही लिखा जावेगा। जिन्होंने दलितों के उत्थान व कल्याण के लिये बलिदान

दिये, प्राणोत्सर्ग किया, ये सरकारें उन आर्य हुतात्माओं का नाम तक लेना नहीं चाहतीं। जातिवाद, वैमनस्य और दलित समस्या स्वामी विवेकानन्द जी का अमेरिका का भाषण सुनाकर दूर नहीं होंगी। आपातकाल जब १९७५ में थोपा गया तब मैं साबरमती आश्रम देखने गया। वहाँ गाँधीजी के पहले हरिजन सहयोगी भक्त का चित्र देखकर मेरे मन में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के पहले दलित भक्त का पता लगाने का विचार आया। मैं स्वामी जी की आरम्भिक कर्मभूमि रामामण्डी पहुँचा। वहाँ श्रीयुत् महाशय निहालचन्द वयोवृद्ध से यही जानकारी माँगी।

आपने कहा, "स्वामी जी का पहला दलित शिष्य व भक्त किशनसिंह था। जिसके विवाह की घटना आपने पुस्तक में दी है। प्रथम विश्वयुद्ध से भी पहले उसके विवाह में जाट, बनिये, ब्राह्मण, खत्री सब आर्य युवक गये। इस दृष्टि से यह भारत की ऐसी पहली बारात व शादी थी। चेले अड़ गये कि स्वामी जी भी साथ चलें।" स्वामीजी ने कहा, "अरे पगलो! साधु का शादी-बारात में क्या काम?"

चेलों ने मर्मस्थान पर चोट मारी। "तो फिर किशनसिंह विवाह ही नहीं करेगा।"

अरे, उस कन्या का क्या बनेगा? महाराज को जाना पड़ा। ऊँटों पर बारात ने जाना था। स्वामी जी अड़ गये कि मैं पैदल ही चलूँगा। आप ऊँटों पर चलो। मैं साधु हूँ, बाराती नहीं बन सकता। सारी बरात पैदल गई। पूज्य स्वामी जी पलंग पर बैठे-बैठे टाँगें लटकाकर पाँच मिनट का उपदेश, सन्देश आशीर्वाद देकर वहाँ से रामाँ को लौट आये। दलितोद्धार, समरसता, एकता, भाईचारे की ऐसी कोई दूसरी घटना भारत के आधुनिक इतिहास से कोई सुनाओ, बताओ।

श्री डॉ. अशोक आर्य जी ने, मान्य रमेश जी ने दिल्ली से अभी-अभी सूचना दी है कि 'स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा' ग्रन्थ इस लेख के छपने तक जिल्द बंधकर तैयार हो जायेगा। गाँधी जी को कन्नड़ महाकवि क्रन्थ ने देवदासियों की दुर्दशा के विषय में एक पत्र लिखा। बापूजी ने उन्हें सदाचारपूर्वक जीवन बिताने का उपदेश भेजा। यह दिसम्बर सन् १९२६ की घटना है। निराश होकर स्वामी श्रद्धानन्द जी को यही बात लिखी। स्वामी जी ने शास्त्रों के प्रमाण देकर देवदासियों को नरक-कुण्ड से निकालने के लिये उनके पुनर्विवाह का आन्दोलन छेड़ने को कहा। क्रन्थ जी ने लिखा है तब पूरे देश में स्वामी श्रद्धानन्द ही एकमेव ऐसा निर्भीक सुधारक विचारक था, जिसका हृदय दुखिया देवदासियों के लिये पिघला। मेरे इस नये ग्रन्थ में चौंकाने वाली ऐसी नई-नई जानकारियाँ व पर्याप्त सामग्री है। ग्रन्थ पर आर्यसमाज के प्रेमियों तथा विरोधियों सबकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करूँगा।

लद्दाख तिब्बत की समस्या- सरदार पटेल ने पं. नेहरू को तिब्बत चीन को अर्पित करने के दुष्परिणाम सुझाते हुये पत्र लिखा। नेहरू जी को विश्वशान्ति व राजमद का नशा था। कतई न सुनी। कश्मीर समस्या, लद्दाख समस्या-ये नेहरू जी की देन हैं। बिहार में जब नोआखली के अत्याचारों को प्रतिक्रिया हुई, तब नेहरू जी ही अन्तरिम सरकार के प्रधानमन्त्री थे। क्या यह सत्य नहीं कि तब हिन्दुओं पर बमवर्षा भी की गई। और भी कहीं नेहरू जी ने बमवर्षा करवाई क्या? कश्मीर से लाखों कश्मीरी हिन्दू भगा दिये गये। कांग्रेस का राज था। उजाड़नेवालों को क्या दण्ड मिला? जय हो नेहरूवादी सैक्युलरिज़्म की। नेहरू जी की देन के कटुफल देश चख रहा है।

पं. लेखराम का एक दीवाना मिशनरी- आर्यसमाज को राजनीतिक दल तो फूटी आँख नहीं देख सकते। आर्यसमाज के पास आज कोई स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा नारायण स्वामी और लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द नहीं। श्यामभाई जैसा शूर शिरोमणि बलिदानी रक्षक नहीं तथापि कई परमोत्साही, निःस्वार्थी, परमार्थी और पुरुषार्थी मिशनरी आज भी प्राणवीर लेखराम के पथ पर निरन्तर बढ़ रहे हैं। मेरठ के धर्मपाल जी वेदपथिक ने समय-समय पर कई बार भागदौड़ करके सूझबूझ से अलभ्य स्रोत व दस्तावेज़ खोजकर हमें सौंपे, जिनका बहुत लाभ समाज को मिला। अब वीरवर वेदप्रकाश जी गुंजोटी महाराष्ट्र पर एक सर्वथा अलभ्य न्यारा प्यारा बलिदान विशेषाङ्क खोज निकाला है। दक्षिण में इसे किसी ने देखा व सुना ही नहीं।

श्रद्धाराम फिल्लौरी के लेखों व रचनाओं का राजेन्द्र टोकी महोदय ने एक नया संग्रह प्रकाशित करवाकर फिर ऋषि दयानन्द पर वार किया है। आर्य जनता बतावे इसका क्या इलाज करना है। इस व्यक्ति को इतिहास के तथ्यों का ज्ञान नहीं। यह सनकी है। धर्मपाल जी ने सामग्री भेज दी है। चाहो तो सेवा कर दूँ?

श्री लक्ष्मण जी जिज्ञासु ने मैक्समूलर की अन्तिम पोथी खोजकर पहुंचा दी है। हिन्दुओं की आँखें खोलने के लिये क्या इस पुस्तक की शव-परीक्षा की जावे? **धर्मवीर जी की हुंकार भूलो मत, भूलो मत।**

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग—साधना शिविर

दिनांक : १७ से २४ जून, २०१८

(ज्येष्ठ शुक्ल ४ से ज्येष्ठ शुक्ल ११, सम्वत् २०७५ तक)

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग-साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा- खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।

१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।
उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ-मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

स्वामी विष्वङ्‌ परिव्राजक
संयोजक

ओममुनि
मन्त्री

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टैण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वप्नानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अत: दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

पाणिनिकाल एवं संस्कृत में द्विवचन

आचार्य उदयवीर शास्त्री

पिछले दिनों जनवरी-फरवरी (१९७१) में फिनलैण्ड देश के निवासी डॉ. पारपोला दिल्ली आये हुए थे। उनके विषय में सुना गया कि उन्होंने मोइञ्जोदड़ो[१] और हड़प्पा की लिपि व भाषा को समझने के लिए पर्याप्त प्रयत्न किया है। डॉ. महोदय का यह दावा मालूम हुआ कि उक्त लिपि व भाषा को समझ लेने में उन्होंने सफलता प्राप्त कर ली है। इसी धारणा को स्पष्ट कर देने के लिए केन्द्रीय पुरातत्त्व अनुसन्धान विभाग के भवन में उनके दो प्रवचन हुए, एक दिनांक १-२-७१ को तथा दूसरा ४-२-७१ को।

गाजियाबाद निवासी श्री कैलाशचन्द्र वर्मा के सहयोग से पहले प्रवचन में सम्मिलित होने का मुझे सुअवसर प्राप्त हो सका। डॉ. पारपोला का कहना है कि मोइञ्जोदड़ो और हड़प्पा की लिपि व भाषा का किसी आर्य लिपि व भाषा से कोई सम्बन्ध न होकर द्रविड़ लिपि व भाषा से सम्बन्ध है। आर्यों की किसी लिपि व भाषा का प्रसार भारत में आर्यों के बाहर से यहाँ आने पर हुआ। उनके विचार से आर्यों के भारत में आने का काल ईसा पूर्व तेरहसौ वर्ष से सत्रहसौ वर्ष के अन्तराल में है। उससे पूर्व यहाँ द्रविड़ों का निवास था, आर्यों ने आकर उन्हें खदेड़ा और इस भूभाग पर अपना अधिकार जमा लिया।

उक्त लिपि व भाषा द्रविड़ लिपि व भाषा से सम्बद्ध है, अपने इस साध्य को सिद्ध करने के लिए डॉ. पारपोला ने प्रमाण प्रस्तुत किया कि प्राचीन द्रविड़ लिपि के उत्कीर्ण लेखों में द्विवचन का प्रयोग देखा जाता है। मोइञ्जोदड़ो व हड़प्पा की भाषा में भी द्विवचन का प्रयोग है। संसार की अन्य आर्यकुल की भाषाओं में द्विवचन का प्रयोग नहीं देखा जाता। केवल भारतीय आर्यों की संस्कृत भाषा में द्विवचन का प्रयोग है। ईसा पूर्व सत्रहसौ वर्ष के अनन्तर काल में जब आर्य बाहर से भारत में आये, तब उन्होंने यहाँ की प्रचलित भाषा द्रविड़ से अपनी भाषा में द्विवचन का अनुकरण (borrow) किया। भाषा में मूलरूप से द्विवचन की मान्यता मोइञ्जोदड़ो आदि की भाषा का द्रविड़ भाषा से सम्बन्ध समझने में पर्याप्त प्रबल प्रमाण है।

विचार करना चाहिये कि इस धारणा में सच्चाई की संभावना कहाँ तक है। डॉ. पारपोला के भाषण के अनन्तर कहा गया कि इस विषय में किसी को अन्य वक्तव्य कहना हो तो कह सकते हैं।

पुरातत्त्व अनुसन्धान विभाग के निदेशक डॉ. बी.बी. लाल ने प्रथम इस अंश पर प्रकाश डाला कि द्रविड़ भाषा के प्राचीन उत्कीर्ण लेखों में द्विवचन के प्रयोग को इस दिशा में प्रमाणरूप से प्रस्तुत करना अत्यन्त शिथिल है, कारण यह है कि द्रविड़ भाषा के अभी तक उपलब्ध लगभग बयालीस अभिलेखों में से केवल एक में स्पष्ट और दूसरे एक में अस्पष्ट द्विवचन का प्रयोग उपलब्ध है, इतना अत्यल्प प्रयोग द्रविड़भाषा में मौलिक रूप से द्विवचन के प्रयोग की मान्यता के लिए उपयुक्त गवाही नहीं है। यह अधिक संभव है कि द्रविड़ भाषा के किसी अभिलेख में अन्यत्र से यह अनुकरण किया गया हो।

इस विषय में अपने विचार अभिव्यक्त करने के लिए मुझे भी अवसर प्रदान किया गया। उन्हीं भावों को यहाँ लिपिबद्ध करने का प्रयास है।

भाषा में द्विवचन- प्रयोग का इतिहास जानने के लिए हमें संस्कृत भाषा के व्याकरण पर दृष्टिपात करना होगा। उपलब्ध संस्कृत व्याकरणों में आचार्य पाणिनि का व्याकरण अधिक पूर्ण एवं मूर्द्धन्य है। इस विवेचन के प्रसंग से हमारा यह समझने का मुख्य लक्ष्य होगा कि पाणिनि का काल क्या हो सकता है? इसी आधार पर यह समझने में सुविधा हो सकेगी कि संस्कृत-भाषा में द्विवचन का प्रयोग अनुकरण किया गया है अथवा वह इसी भाषा का मौलिक रूप है।

इस विवेचन से पूर्व एक और बात समझ लेनी उपयुक्त होगी। कहा जाता है कि आर्यकुल की भाषाओं में सिवाय संस्कृत के अन्यत्र कहीं द्विवचन का प्रयोग नहीं है। कल्पना की जाती है कि संस्कृत और उसके समकक्ष की यूरोपीय

भाषाओं की जननी कोई एक अन्य भाषा प्राचीनकाल में रही होगी, जिसमें द्विवचन के प्रयोग का अभाव था। उसी के अनुकूल, उससे विकृत व परिवर्त्तित होने वाली यूरोपीय भाषाओं में द्विवचन का अभाव रहा। उसी प्राचीन अज्ञात भाषा से विकृत व परिवर्त्तित होने वाली संस्कृत भाषा में द्विवचन का प्रयोग यह प्रकट करता है कि संस्कृत में यह कहीं से अनुकरण किया गया है।

इस कथन की यथार्थता को समझने के लिए हम भारत की वर्त्तमान भाषाओं की ओर विद्वान् पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। इस विषय में संभवतः किन्हीं भी विचारक विद्वानों का मतभेद न होगा कि दक्षिण भारत की भाषाओं को इस विवेच्य की सीमा में न लाकर उत्तर भारत की जितनी भी प्रान्तीय भाषाएं हैं, उन सबका मूल संस्कृत है। इन भाषाओं में मराठी, कोंकणी, गुजराती, काठियावाड़ी, राजस्थानी, पंजाबी, कश्मीरी, कन्नौरी, सिरमौरी, गढ़वाली, कुमायुनी, हिन्दी (हिन्दी के अवान्तर भेद-शूरसेनी, मागधी, अवधी आदि), उत्कल, बंगला, असमिया आदि का समावेश है। ये सब भाषा संस्कृत-भाषा से विभिन्न धाराओं में परिवर्त्तित व विकृत होती हुई अपने वर्त्तमान रूप में पहुँची हैं। इनका मूल संस्कृत होने पर भी इनमें से किसी भाषा में द्विवचन का प्रयोग नहीं है। क्या इस आधार पर यह कल्पना की जा सकती है कि इन भाषाओं का मूल कोई अन्य ऐसी प्राचीन भाषा रही होगी, जिसमें द्विवचन के प्रयोग का अभाव था?

वस्तुतः ऐसी कल्पना निराधार ही होगी। इसी के अनुसार क्या यह सुझाव दिया जा सकता है कि भारतीय भाषाओं के समान आर्यकुल की अन्य यूरोपीय आदि भाषाओं का मूल संस्कृत है? अपनी विभिन्न परिस्थितियों एवं परिवर्त्तन काल की आवश्यकताओं को देखते हुए इन भाषाओं में द्विवचन के प्रयोग को त्याग दिया गया है। अस्तु जो हो, इस समय यूरोपीय भाषाओं की जननी का विवेचन इस लेख का लक्ष्य नहीं है। हमें देखना चाहिये, भारत में संस्कृत भाषा के प्रयोग का वह कौन सा काल संभव है, जब यह कहा जा सके कि उसमें द्विवचन का प्रयोग द्रविड़ भाषा से अनुकरण किया गया।

संस्कृत भारतीय आर्यों की भाषा रही है। व्याकरण सदा सर्वसाधारण जनता में व्यवहृत होने वाली भाषा का हुआ करता है। अति प्राचीनकाल में संस्कृत के अनेक व्याकरणों का पता लगता है, परन्तु इस समय संस्कृत का सर्वोपरि मूर्द्धन्य व्याकरण पाणिनि आचार्य का बनाया हुआ है। व्याकरण में निर्दिष्ट शब्द प्रयोगों की रचना के आधार पर यह निश्चितरूप से कहा जा सकता है कि पाणिनि ने यह व्याकरण उस समय बनाया, जब उत्तर अथवा पश्चिमोत्तर भारत के सर्वसाधारण जनता (अपठित जनता भी)-संस्कृत भाषा का प्रयोग करती थी। पाणिनि ने अपनी रचना अष्टाध्यायी में शतशः ऐसे प्रयोग के साधुत्व का उल्लेख किया है, जो नितान्त ग्राम्य एवं प्रायः अपठित जनता के व्यवहारोपयोगी हैं। कतिपय प्रयोग इस प्रकार हैं-

(१) शाक आदि बेचने वाले कूंजड़े बिक्री की सुविधा के लिए पालक, मूली, मेथी, धनिया, पोदीना आदि की गड्डी बांधकर मूल्य के अनुसार आजकल आवाज लगाते हैं-पैसा-पैसा, दो-दो पैसा आदि। पाणिनि काल में ऐसा व्यवहार संस्कृतभाषा में होता था। उसके लिए-'**मूलकपणः, शाकपणः, धान्यकपणः**' आदि प्रयोगों के साधुत्व का निर्देश पाणिनि ने एक सूत्र '**नित्यं पणः परिमाणे**' (३।३।६६) में किया है। इन पदों का प्रयोग बाजार में शाक-भाजी बेचने वाले किया करते थे।

(२) इसी प्रकार रसोई बनाने वाले पाचक, खेती करने वाले किसान के दैनिक प्रयोग में आने वाले पदों के साधुत्व का निर्देश अनेकत्र यथाप्रसंग (अष्टाध्यायी, ४।२।१६-२० तथा ४।४।२२-२६) पाणिनि ने किया है। उन निर्देशों के अनुसार दही या मठ्ठे से बना खाद्य '**दाधिकम्**' '**औदश्वित्कम्**' कहा जाता था, नमकीन शाक रस को '**लवणः सूपः**' कहते थे।

(ग) किसानों के धान्योपयोगी विभिन्न क्षेत्रों के वाचक-**प्रैयङ्गवीनम्, ब्रैहेयम्, यव्यम्, तैलीनम्,** तिल्यम् आदि पदों के साधुत्व का निर्देश पाणिनि ने अष्टाध्यायी (५।२।१-४) में किया है। ग्रामीण किसान जिन खेतों में विभिन्न अनाज बोते थे, उन खेतों के लिए इन पदों का प्रयोग करते थे।

(४) इसी प्रकार कपड़े रंगने वाले रंगरेजों के व्यवहार

में आने वाले-'**माञ्जिष्ठम्, कापायम्, लाक्षिकम्, रौचनिकम्**' आदि पदों के साधुत्व के लिए पाणिनि ने '**तेन रक्तं रागात्। लाक्षारोचनाट्ठक्**' (४।२।१-२) आदि सूत्र कहे हैं।

(५) इस विषय में दो स्थलों का और उल्लेख किया जाता है, जो विशेष ध्यान देने योग्य है। व्यास नदी के उत्तर और दक्षिण की ओर बने कुओं के नाम, बनवाने वालों के नाम से व्यवहृत होते थे। दत्त का बनवाया हुआ कुआं '**दात्तः**' कहा जाता था और गुप्त का बनवाया हुआ '**गौप्तः**' (अष्टा. ४।२।७४, उदक् च विपाशः)। नदी के दोनों ओर के प्रदेशों में व्यवहृत होने वाले इन पदों का स्वरूप समान था। उत्तर की ओर के लोग पद के अन्तिम अक्षर पर जोर देते थे, अर्थात् वे इन पदों को अन्तोदात्त उच्चारण करते थे तथा नदी के दक्षिण की ओर के निवासी इन पदों के पहले अक्षर पर जोर देते थे, अर्थात् वे इन पदों का आद्युदात्त उच्चारण करते थे। उस प्रदेश में निवास करने वाली साधारण जनता द्वारा इन पदों के उच्चारण की विशेषता पर आचार्य पाणिनि ने ध्यान देकर अन्तोदात्त उच्चारण के लिए '**अञ्**' प्रत्यय और आद्युदात्त उच्चारण के लिये '**अण्**' प्रत्यय का विधान किया, जिससे पदों का स्वरूप समान रहे और उच्चारण का अन्तर स्पष्ट किया जा सके।

काशिकाकार ने सूत्र (४।२।७४) की व्याख्या करते हुए पाणिनि के विषय में लिखा है-'**महती सूक्ष्मेक्षिका वर्त्तते सूत्रकारस्य**' अपने काल की लोकभाषा के विषय में आचार्य पाणिनि का इतनी गहराई व सूक्ष्मता से विचार करना आश्चर्यजनक है, जो पदों के उच्चारण भेद को भी अभिव्यक्त करने का ध्यान रखकर उसके लिए नियमित व्यवस्था कर दी।

(६) अन्य एक प्रंसग में पाणिनि ने कहा- जाति के एक होने से जातिवाचक पद का एकवचन में प्रयोग प्राप्त होता है, परन्तु लोकभाषा में एकवचन और बहुवचन दोनों रूपों में प्रयोग देखा जाता है, उसी के अनुसार आचार्य ने उन पदों के साधुत्व का निर्देश किया- '**जात्याख्यायामेकस्मिन् बहुवचनमन्यतरस्याम्**' (अष्टा. १।२।५८)। जैसे- '**यवः सम्पन्नः, यवाः सम्पन्नाः। व्रीहिः सम्पन्नः, व्रीह्यः सम्पन्नाः**'। आज भी किसान यही प्रयोग करता है-जौ पक गया, अथवा जौ पक गये, काट डालो। धान पक गया, धान पक गये, इत्यादि। आज के और पाणिनिकाल के व्यवहार में कोई अन्तर नहीं, केवल भाषा में अन्तर है। आज का किसान हिन्दी बोलता है, उस समय का संस्कृत बोलता था। उसी व्यवहार के अनुरूप पाणिनि ने नियमों का निर्देश किया।

पाणिनि व्याकरण की उक्त अन्तःसाक्षियों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि पाणिनि के काल में संस्कृत लोकव्यवहार में आने वाली जनसाधारण की भाषा थी। पाणिनि के यथार्थ काल का परिचय प्राप्त करने के लिए इस स्थिति पर ध्यान देना होगा।

आज पाणिनि का काल ईसापूर्व पांचवी-छठी शताब्दी माना जाता है। इस विचार को प्रस्तुत करने वाले विद्वानों का कहना यह है कि पाणिनि का काल ईसापूर्व पाँचवीं-छठी शती के और इधर नहीं खींचा जा सकता, लिहाजा वही समय मान लिया गया। भगवान् बुद्ध का भी तथाकथित काल यही माना जाता है। पर यह सर्वसम्मत निर्विवाद सत्य है कि भगवान् बुद्ध के तथाकथित काल में उत्तर अथवा पश्चिमोत्तर भारत के निवासी सर्वसाधारण की भाषा संस्कृत नहीं थी। उस समय जनसाधारण के व्यवहार की भाषा पाली अथवा प्राकृत थी। उस समय का बौद्ध साहित्य इसी भाषा में उपलब्ध होता है। भगवान् बुद्ध ने अपने विचारों के साधारण जनता में प्रचार-प्रसार के लिए उसी भाषा का अवलम्बन किया जो जनता के व्यवहार की भाषा थी। इसलिए पाणिनि का वह काल किसी प्रकार संभव नहीं।

इस तथ्य को सभी विद्वान् स्वीकार करते हैं कि उस काल की पाली व प्राकृत भाषा उससे प्राक्तन काल की जनभाषा संस्कृत का ही विकृतरूप है। संस्कृत भाषा के प्राकृत का वह रूप विकृत होने में कितना समय लगा होगा, इसका निश्चयपूर्वक कह सकना तो कठिन है, पर मोटा अन्दाज एक आधार पर लगाया जा सकता है। खजुराहो में उत्कीर्ण लिपि व उसकी भाषा वर्त्तमान नागरीलिपि व हिन्दी भाषा से बहुत समानता रखती है, उस भाषा को वर्त्तमान रूप में आने के लिए लगभग एक सहस्र वर्ष लग गये हैं। संस्कृत और बुद्धकाल की प्राकृत भाषा में उससे

भी कहीं अधिक अन्तर है। संस्कृत को विकृत व परिवर्त्तित होते-होते उस रूप में आने के लिए कम से कम हजार-बारह सौ वर्ष का समय अवश्य माना जाना चाहिये।

इसके अनुसार तथाकथित बुद्धकाल से लगभग बारहसौ वर्ष पहले पाणिनि का काल माना जाना चाहिये। तब सत्रहसौ-अठारसौ वर्ष ईसापूर्व के लगभग पाणिनि का काल आता है। डॉ. पारपोला का कहना है कि आर्य भारत में ईसापूर्व तेरहसौ वर्ष से सत्रहसौ वर्ष के बीच आये। यदि अधिक से अधिक पहले का समय भी भारत में आर्यों के आने का मान लें तो पाणिनि द्वारा व्याकरण रचना का तथा आर्यों के भारत में आने का एक ही समय रहता है। तब क्या यह कहा जायेगा कि भारत में आर्यों के आने के साथ-साथ पाणिनि भी अपने व्याकरण को लेकर यहाँ आया? क्योंकि जिस भाषा का यह व्याकरण है वह भाषा उन आर्यों की मानी जाती है, और है भी, जिन के विषय में यह कहा जाता है कि ये भारत में कहीं बाहर से आये।

व्याकरण के विषय में यह कथन सर्वथा असंगत व निराधार है कि भारत में आर्यों के आगमन के साथ यह आया। अष्टाध्यायी व गणपाठ में उत्तर-भारत व पश्चिमोत्तर भारत के अनेक नद, नदी, नगर, वन व विशिष्ट व्यक्तियों के नामों का उल्लेख हुआ है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि पाणिनि ने इस व्याकरण की रचना यहीं रहते की। इसके साथ यह भी विचारणीय है कि आर्यों ने ईसापूर्व सत्रहवीं शताब्दी में यहां आते ही उत्तर भारत की समस्त साधारण जनता को संस्कृत कैसे सिखा दी? उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि पाणिनि व्याकरण की रचना के समय उत्तर व पश्चिमोत्तर भारत की सर्वसाधारण जनता-किसान खेतिहर मजदूर, शाक सब्जी बेचने वाले कूंजडे तथा रंगने वाले रंगरेज व रसोइये आदि तक की दैनिक व्यवहार की भाषा संस्कृत थी। सत्रहवीं-अठारहवीं ईसापूर्व की शताब्दी में भारत आते ही आर्यो ने सबको संस्कृत सिखा दी, क्या उनके पास कोई जादू की छड़ी थी, जिसे हिलाते ही समस्त उत्तर भारत संस्कृत बोलने लगा?

वास्तविकता यह है कि आर्य भारत में बाहर कहीं से नहीं आये। सदा से यहीं रहते हैं। द्वापर युग के अन्तकाल तक अर्थात् अब से लगभग पांच सहस्र वर्ष पूर्व तक यहाँ की सब जनता संस्कृत भाषा का प्रयोग करती थी। महाभारत युद्ध के अनन्तर विशिष्ट व्यक्तियों के न रहने और युद्धोत्तर की आपदाओं ने जनता को अविद्यान्धकार में ला पटका। लगभग डेढ़ सौ वर्ष बीतते-बीतते पाणिनि का प्रादुर्भाव हुआ। शब्दशास्त्र में निष्णात होकर उसने देखा कि सर्वसाधारण भाषा में तेजी से परिवर्तन होने की आशंका है। विद्वत्समाज का सम्पर्क न रहने से प्रयोग में विकार आने को हैं। उस काल में पाणिनि ने व्याकरण की रचना कर संस्कृत भाषा को सुसम्बद्ध, व्यवस्थित व सुरक्षित बना दिया। उस समय तेजी से भाषा में परिवर्तन हो रहा था, इसमें यह भी प्रमाण है कि पाणिनि के तत्काल अनन्तर अन्य अनेक परिवर्तन व विकारों की व्यवस्था के लिए आचार्य कात्यायन को अपने वार्त्तिक सन्दर्भों की रचना करनी पड़ी, तब कहीं आज तक संस्कृत भाषा उसी रूप में सुरक्षित है। विकृत व परिवर्तित होती हुई वह भाषा अपने निरन्तर प्रवाह में बहती आज वर्त्तमान प्रान्तीय भाषाओं के रूप में आ पहुँची है।

अपने संगठन में संस्कृत कभी द्रविड़ भाषा से प्रभावित नहीं हुई। इसकी रचना अपने रूप में मौलिक व स्वतन्त्र है। कालान्तर में अन्य भाषाओं के शब्दों को इसने आत्मसात् किया हो, यह साधारणा बात है, इस विषय में कुछ नहीं कहना। संस्कृत में द्विवचन का प्रयोग अपनी मौलिक रचना के अनुकूल है, कहीं से अनुकृत नहीं। इसके प्रयोग का मूल आधार क्या है? इसका विवेचन इस समय लक्ष्य नहीं। पर निस्सन्देह उसका आधार विचारपूर्ण, विज्ञानमूलक व दार्शनिक भित्ति पर अवलम्बित है। इस लेख द्वारा केवल इस तथ्य पर प्रकाश डालने का यत्न किया है कि अब से पांच सहस्र वर्ष पूर्व भारत में जनता द्वारा संस्कृत बोली जाती थी। तब द्रविड भाषा के उत्कीर्ण लेखों का अस्तित्व तक न था। संस्कृत में द्विवचन का प्रयोग अपना मौलिक है।

टिप्पणी- १. इसकी उच्चारण 'मोहनजोदड़ो' अशुद्ध है। 'दड़ो' या 'दाड़ो' ढेर को कहते हैं, इधर भाषा में भी ढेर को 'दड़ा' कहते हैं, 'जो' छठी विभक्ति का चिह्न है। 'मोइन' का अर्थ है-मरे हुए। पूरे पद का अर्थ है-'मरे हुओं का ढेर।'

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. **वेदपथ के पथिक** (आचार्य धर्मवीर स्मृति ग्रन्थ)

पृष्ठ संख्या-२६४

मूल्य-रु. २००/-(आधे मूल्य पर उपलब्ध)

परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान डॉ. धर्मवीर जी का जीवन सत्य के लिये संघर्षपूर्ण रहा है। विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने ईश्वर, वेद और धर्म को अपने जीवन से तनिक भी अलग नहीं होने दिया और यही विशेषता रही, जिसके कारण वे एक आदर्श आचार्य, आदर्श नेता, आदर्श लेखक, आदर्श सम्पादक एवं आदर्श उपदेशक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनके जीवन की कही-अनकही घटनाएँ हमें भी प्रेरणा दें, इस दृष्टि से ये ग्रन्थ अवश्य पठनीय है। जिन्होंने डॉ. धर्मवीर जी को निकट से देखा है, जो उनके जीवन की घटनाओं के साक्षी रहे हैं, उनके संस्मरण इस कर्मयोगी के जीवन की बारीकियों को उजागर करते हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में चित्रों के माध्यम से भी उनके जीवन की कुछ झलकियों को दर्शाया गया है।

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र-

पृष्ठ संख्या-३३६ **मूल्य**-रु. २००/-

महर्षि दयानन्द, उनके उद्देश्यों, कार्यों, योजनाओं एवं व्यक्तित्व को समझने में उनके द्वारा लिखे पत्र उतने ही उपयोगी हैं, जितना कि उनका जीवन-चरित्र। ये पत्र महर्षि के हस्तलिखित हैं। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें मूल-पत्रों की प्रतिलिपि दी गई है और साथ ही वह पत्र टाइप करके भी दिया गया है। यह पुस्तक विद्वानों के दीर्घकालीन पुरुषार्थ का फल है। जनसामान्य इससे लाभ ले-यही आशा है।

३. अंग्रेज जीत रहा है-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-२२२ **मूल्य**-रु. १५०/-

इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के 'भाषा और शिक्षा' विषय पर लिखे गये ४२ सम्पादकीयों का संकलन किया गया है। 'परोपकारी' पत्रिका में लिखे गये इन सम्पादकीयों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की माँग समय-समय पर उठती रही है। अतः पुस्तक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। डॉ. धर्मवीर जी का चिन्तन बेजोड़ था। वे जिस विषय पर जो भी लिखते वह अद्वितीय हो जाता था। उनके अन्य सम्पादकीयों का प्रकाशन भी प्रक्रिया में है। पुस्तक का आवरण व साज-सज्जा अत्याकर्षक है।

४. स्तुता मया वरदा वेदमाता-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१३५ **मूल्य**-रु. १००/-

वेद ईश्वर प्रदत्त आचार संहिता है। वेद की आज्ञा ईश्वर की आज्ञा है और वही धर्म है, इसलिये मानव मात्र की समस्त समस्याओं का समाधान वेद में होना ही चाहिये। वेद के कुछ ऐसे ही सूक्तों की सरल सुबोध व्याख्या ही इस पुस्तक में की गई है। पुस्तक की भाषा इतनी सरल है कि नये-से नये पाठक को भी सहज ही आकर्षित कर लेती है। व्याख्याता लेखक आचार्य डॉ. धर्मवीर जी के गहन आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक चिन्तन व अनुभवों के परिणामरूप यह पुस्तक है।

५. इतिहास बोल पड़ा-

लेखक - प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

पृष्ठ संख्या-१५९ **मूल्य**-रु. १००/-

इस पुस्तक में इतिहास की परतों से कुछ दुर्लभ तथ्य निकालकर दिये गये हैं, जो कि आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती के गौरव का बखान करते हैं। पुस्तक के लेखक प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु हैं। ऋषि के समय में देश-विदेश से छपने वाले पत्र-पत्रिकाओं के उद्धरण इस पुस्तक में दिये गये हैं।

६. बेताल फिर डाल पर

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१०४ **मूल्य**-रु. ६०/-

डॉ. धर्मवीर जी की हॉलैण्ड एवं अमेरिका यात्रा का विवरण एवं अनुभव इस पुस्तक में है। विदेश में आर्यसमाज की स्थिति, कार्यशैली, वहाँ की परिस्थितियाँ एवं विशेषताओं को यह पुस्तक उजागर करती है। यायावर प्रवृत्ति के विद्वान् आचार्य धर्मवीर जी की यह पुस्तक एक प्रचारक के जीवन पर भी प्रकाश डालती है।

७. लोकोत्तर धर्मवीर-

लेखक - तपेन्द्र वेदालंकार,

पृष्ठ संख्या-४४ **मूल्य**-रु. २०/-

तपेन्द्र वेदालंकार (सेवानिवृत्त आई.ए.एस.) ने इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के जीवन की कुछ ऐसी घटनाओं पर प्रकाश डाला है, जिनसे धर्मवीर जी के महान् लक्ष्यों व तदनुरूप कार्यशैली का पता चलता है। इस लघु पुस्तक से प्रेरणा लेकर प्रत्येक आर्य ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के उद्देश्यों को पूर्ण करने में उत्साहित हो-यही आशा है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

मनोरञ्जक इतिहास पुस्तक उपदेश मञ्जरी

श्रीनिवास राव

महर्षि दयानन्द के पूना व्याख्यान जब 'उपदेश मञ्जरी' पुस्तक के नाम से महात्मा मुंशीराम जी ने उर्दू में प्रकाशित और प्रचारित किये तो इन व्याख्यानों की आर्यजगत् में धूम मच गई। धूम भी ऐसी मची कि पूना के इन व्याख्यानों पर कुछ भी लिखते हुये कोई भी लेखक 'उपदेश मञ्जरी' तथा महात्मा मुंशीराम जी की चर्चा किये बिना रह ही नहीं सकता। कारण महात्मा जी का इस व्याख्यान संग्रह से अब सम्बन्ध ही कुछ ऐसा हो गया है कि एक का नाम लेते हुये दूसरे का ध्यान आ ही जाता है।

लेख के अन्त में हमने 'उपदेश मञ्जरी' विषयक ठाकुर शिवरत्न जी के लेख पर महात्मा जी की प्रतिक्रिया का सार दिया है। 'सद्धर्म प्रचारक' में इसे पढ़कर ठाकुर शिवरत्न जी के परिवार से जुड़े उस काल के आर्यसमाज के एक यशस्वी सेवक धाराशिव निवासी श्रीमान् श्रीनिवासराव जी (आचार्य नरदेव वेदतीर्थ ज्वालापुर के पिताजी) ने उपरोक्त शीर्षक से 'सद्धर्म प्रचारक' में प्रकाशनार्थ दिया था। इतिहासप्रेमियों के लिये इसका विशेष महत्त्व है। श्रद्धेय पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक की प्रेरणा से इस उर्दू लेख को अनूदित करके हमने 'वेदवाणी' में दिया था। आज फिर इसका अनुवाद परोपकारी में देने का निश्चय किया है। 'जिज्ञासु'

दिनांक २५ नवम्बर १८९८[१] के 'सद्धर्म प्रचारक' में बाबू शिवरत्न सिंह जी वर्मा पातूर निवासी का पत्र तथा आपकी ओर से टिप्पणी छपी है। इसलिये उसकी पूरी वास्तविकता आपको जतलाने के लिये लिखता हूँ। मैं पूना के सुप्रसिद्ध विष्णु शास्त्री चिपलूणकर का बहुत प्रशंसक था। मैं उनको सत्यपुरुष जानता था। इसलिये उनकी निबन्धमाला का गीता के तुल्य कई बार पाठ किया।[२] मैं स्वामी दयानन्द को असत्य पुरुष और हिन्दू धर्म को डुबोने वाला समझता था। महाशय गोविन्दसिंह जी वर्मा ने स्वामी दयानन्द की पुस्तकें मेरे पास पढ़ने के लिये दी थीं, परन्तु वे महीनों तक वैसी ही पड़ी रहीं। उनको हाथ तक नहीं लगाया था। **गोविन्दसिंह जी उनकी चर्चा करते तो झूठ कह देता कि देखता हूँ। उन पुस्तकों को देखने को जी नहीं चाहता था।**

एक बार मैं पूना में श्रीमान् विष्णु शास्त्री चिपलूणकर के पास बैठा हुआ था कि एक पलटन के सैनिक ने उनके पास आकर नमस्ते कहा। श्रीमान् शास्त्री ने उस पर क्रोधित होकर उसको और स्वामी दयानन्द सरस्वती को बहुत अपशब्द कहे। वह सैनिक शान्ति से उनका खण्डन तथा स्वामी जी के मन्तव्य का वर्णन इस उत्तमता से करता कि श्रीमान् शास्त्री जी को मौन ही रहना पड़ा।[३]

मैंने धाराशिव आकर जितने पुस्तक मेरे पास थे सब मन लगाकर पढ़े तथा उनमें उद्धृत प्रमाणों व श्लोकों की भी जाँच-पड़ताल व पुष्टि कर ली। कई मास तक खोज करके अन्ततः हृदय को निश्चय हो गया कि स्वामी दयानन्द जी ऋषियों की कोटि के उन सरीखे निष्पक्ष आप्त पुरुष थे। विष्णु शास्त्री कपटी, हठी व पक्षपाती थे। अन्ततः मैंने निश्चय किया कि स्वामी जी के बारे में विष्णु शास्त्री चिपलूणकर ने जो कुछ झूठ लिखा है[४] उसका पोल खोलना चाहिये। इस सम्बन्ध में मैंने बड़े-बड़े प्रयत्न किये। उनके दो शरीर एक जान मित्रों से, जो जीवित थे, उनसे परिचय प्राप्त करके उनकी कार्यवाही उनके सम्मुख रखी। उन्होंने आश्वासन दिया कि वे भविष्य में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के विरुद्ध अपनी लेखनी नहीं चलायेंगे इत्यादि।

उपरोक्त पुस्तक (पूना के व्याख्यानों की मराठी रिपोर्ट) के सम्बन्ध में विष्णु शास्त्री ने लिखा था कि वह संसार से 'नेस्तो नाबूद' (लुप्त) हो गई है। इसलिये उसकी खोज करके उसे प्रकाशित करवाने का मैंने हृदय में दृढ़ निश्चय कर लिया और प्रयास करता रहा। मैं न्यून अति न्यून पचास बार पूना गया तथा प्रत्येक मुद्रणालय तथा पुस्तकालय आदि में इन्हें खोजता फिरा। अन्ततः मुझे पता चला कि वह पुस्तक राव बहादुर गोपालराव हरिदेशमुख के पास है। मैंने उनसे भेंट की तथा अपना उद्देश्य बताया। उन्होंने पुस्तक निकलवा दी। मैंने उसको पूरा पढ़कर लौटा दिया और उनसे निवेदन किया कि यदि यह पुस्तक आर्यसमाज अमरावती के मन्त्री को आप भेज दें तो वहाँ इसकी प्रतियाँ छपवायेंगे। उन्होंने मेरी विनती स्वीकार करके वह पुस्तक वहाँ भेज दी और कहा कि छपने के पश्चात् एक प्रति हमारे

देखने के लिये भेज दो। मैंने यह स्वीकार किया।

पुस्तक अमरावती में बाबू शिवरत्न जी आदि के देखने में आई। प्रकाशन का विचार (निर्णय) न होने से वह पुस्तक धाराशिव मँगवाई गई। गोविन्द सिंह जी ने कहा कि पूना से पता करना चाहिये कि २०० अथवा ५०० प्रतियाँ प्रकाशित करवाने पर क्या व्यय आयेगा? उतने रुपये दे दूँगा। मैं पूना गया वहाँ श्रीयुत् वामनराव रानाडे (सम्पादक 'ज्ञान-चक्षु') से मिलकर पूछताछ की। उन्होंने मुद्रण के अनुमानिक व्यय की जानकारी तो दे दी, परन्तु यह कहा कि जैसी है वैसी ही छपवाने से अब कुछ लाभ न होगा। उसमें से संस्कृत श्लोकों, श्रुति-वचनों इत्यादि के अर्थ जैसे स्वामी जी किया करते थे वैसा करवाकर उसके पश्चात् लेखक की असावधानी से व्याख्यान के सारांश में जो विसंगतियाँ आई हैं वहाँ पाद टिप्पणियाँ दी जायें। ऐसा करके प्रकाशित करने से जनता का उपकार होगा। तब मैंने रावबहादुर गोपालराव हरिदेशमुख से विनती की, उन्होंने कहा **सम्पादक 'ज्ञान-चक्षु' ठीक कहते हैं।**[५] **हमने अहमदाबाद में स्वामी जी के व्याख्यान सुने हैं। कम से कम दो-तीन घण्टे तक एक व्याख्यान होता था। इस पुस्तक में इतना संक्षेप से लिखा हुआ है कि पाँच मिनट का व्याख्यान हो।**

मैं वह पुस्तक लेकर धाराशिव वापस आया। गोविन्द सिंह जी को सारी बात बता दी। सन् १८९४ के नवम्बर मास में मैं तथा गोविन्द सिंह लाहौर समाज के वार्षिकोत्सव पर गये। उस समय मैं आर्यसमाज मन्दिर वच्छोवाली में बहुत रुग्ण पड़ा हुआ था। सारी रात नींद नहीं आई थी। धर्मवीर पं. लेखराम रात भर मेरे बिछौने के पास ही थे। वार्तालाप करते समय मैंने इस पुस्तक का पूरा इतिहास उन्हें सुना दिया। उन्होंने कहा, ''इसका अनुवाद करके मेरे पास भेज दो तो शेष सारा काज मैं कर लूँगा।[६]

लौटकर अपनी रुग्णता के कारण मैंने पण्डित भगवतीप्रसाद जी शुक्ल को यह कार्य सौंप दिया। गोविन्द सिंह जी के तथा मेरे अनुरोध पर उन्होंने अनुवाद तैयार करके हमारे पास भेज दिया। मैंने अमर धर्मवीर पं. लेखराम जी की सेवा में उनके जालन्धर के पते पर भेज दिया। मूल मराठी पुस्तक पाँच अगस्त सन् १८९७ को आर्यसमाज मन्दिर लाहौर में आपको सौंप दी थी। यदि उसमें अशुद्धियाँ रह गई हैं तो शुद्धिकरण होना आवश्यक है। इसलिये प्रार्थना है कि मूल मराठी पुस्तक, पं. भगवतीप्रसाद का अनुवाद तथा अपनी बनाई उपदेश मञ्जरी तथा पं. गणपति शर्मा का अनुवाद ये चारों रजिस्ट्री करके अथवा बैरंग ही इस सेवक के पास भेज दीजिये। कोई व्यय करना आवश्यक नहीं। यहाँ मैं, बाबू गोविन्दसिंह जी तथा महाशय वासुदेव राव जी वकील प्रथम श्रेणी मिलकर इसका हिन्दी अनुवाद शुद्ध करके आपकी सेवा में भेज देंगे। यह आपका कार्य होगा कि उसे हिन्दी अथवा उर्दू में प्रकाशित कर दें।''

आपका सेवक

श्री निवासराव राव डिप्टी अकाउन्टेन्ट, जिला धाराशिव

इसके आगे महात्मा जी की टिप्पणी है-पण्डित गणपति शर्मा द्वारा किया गया कोई अनुवाद मेरे पास नहीं है। शेष तीनों श्रीनिवास राव जी को भेज दिये गये हैं।[७]

टिप्पणियाँ

१. यहाँ मूल लेख में 'सद्धर्म प्रचारक' में मुद्रणदोष से २६ नवम्बर छप गया था। हमने यहाँ ठीक दिनांक २५ नवम्बर दिया है।

२. यह मराठी साहित्य का एक विशेष साहित्यिक ग्रन्थ माना जाता है। इसमें ऋषि दयानन्द जी की निन्दा में भी एक लेख हैं।

३. सेना के उस सैनिक के धर्मानुराग का इसे चमत्कार ही तो मानना पड़ेगा कि उसने उस युग के मूर्धन्य महाराष्ट्रियन विद्वान्-लोकमान्य तिलक के गुरु को अपनी मधुर वाणी व ज्ञान से चुप करवा दिया। तब पूना में पंजाब, हरियाणा के आर्य सैनिक वैदिक धर्म का यदा कदा डंका बजाते रहे।

४. 'निबन्धमाला' ग्रन्थ की ओर संकेत है। इसमें महर्षि की निन्दा में छपा घृणित मराठी लेख हमने भी पढ़ रखा है।

५. श्री पण्डित युधिष्ठिर जी का विचार भी ऐसा ही था। इन बातों को ध्यान में रखकर नये सिरे से सम्पादन किया, तब जाकर यह पुस्तक छपी। इसमें एक शताब्दी से ऊपर समय निकल गया।

६. पं. लेखराम जी के अरमानों, वलवलों व कार्यक्षमता का क्या कहना।

७. द्रष्टव्य 'सद्धर्म प्रचारक' दिनांक २७-१-१८९९ पृष्ठ ९-१०

मैं आग्रही हूँ

तपेन्द्र वेदालंकार आई.ए.एस. (से. नि.)

पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी महर्षि दयानन्द जी महाराज के रंग में इतने रंग गये कि एक बार पण्डित जी ने दो कपड़ों पर आर्यसमाज के पाँच-पाँच नियम लिखा लिये। एक कपड़ा आगे लटका लिया, दूसरा पीठ से बाँध लिया और चल दिये ऋषि का सन्देश सुनाने-फैलाने। २६.०४.१८६४ को जन्मे तथा १९.०३.१८९० को २६ वर्ष की अवस्था में आर्यसमाज की वेदी पर अपने आप को आहूत कर गये। आर्यसमाज के प्रचार के समक्ष उन्होंने जिलाधीश के अतिरिक्त सहायक कमिश्नर बनने के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। वे देश में विज्ञान के सीनियर प्रोफेसर नियुक्त होने वाले पहले भारतीय थे, परन्तु यह कहकर छोड़ दिया, ''मैं नौकरी के लिए धार्मिक कार्यों की हानि सहन नहीं कर सकता।''[१]

आर्यसमाज के प्रचारक **पं. दौलतराम** झाँसी गये। वहाँ उन्होंने सिपाहियों को भी उपदेश दिया और उनसे अनाथालय के लिए चन्दा ले आये। उन पर अभियोग चलाया गया और यह दण्ड दिया गया कि या तो झाँसी या उसके पाँच मील के अन्दर रहने वाले तथा सरकार को १०० रुपये मालिया या २००० रुपये की आय पर कर देने वाले सज्जनों की जमानतें दिलाओ या एक वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड भुगतो। उन्होंने प्रचार करने के लिए कारावास का दण्ड भुगता।[२]

उत्तरप्रदेश के **पं. भगवानदीन** सरकारी नौकरी में थे। सरकार ने आश्वासन चाहा कि वे आर्यसमाज का काम नहीं करेंगे। पण्डित जी ने सरकारी सेवा से त्यागपत्र दे दिया, आर्यसमाज का काम नहीं छोड़ा बल्कि पूर्णरूप से प्रचार में लग गये। अपना भास्कर प्रेस सभा को दान कर दिया। अपनी विधवा पुत्री का विवाह उस समय किया जब विधवा-विवाह को बिरादरी से अलग करने के लिए पर्याप्त माना जाता था।[३]

महाशय रामचन्द्र जी जम्मू के निवासी थे, सरकारी नौकरी में थे, शेष समय में दलित भाइयों की सेवा करते थे। इस सेवा के कारण प्रचार-सम्मेलन में ही महाशय रामचन्द्र को विरोधियों ने लाठियों से पीटा, किसी को पास नहीं जाने दिया। अस्पताल में सात दिन अचेत दशा में रहकर ही उन्होंने प्राण त्याग दिये।[४] **पं. तुलसीराम जी फरीदकोट** में स्टेशन मास्टर थे। आर्यसमाज का प्रचार करते रहते थे। प्रचार कार्य के विरोधियों ने गोपीराम नाम के युवक को स्टेशन भेजा। अन्ततः गोपीराम ने पण्डित जी के पेट में छुरा घोंप दिया, उनका प्राणान्त हो गया।[५]

संयुक्त प्रान्त (उत्तर-प्रदेश) की प्रतिनिधि सभा के १९०१ में **कुंवर हुक्म सिंह जी** प्रधान थे। आप एक समृद्ध जमींदार थे। आपने १९०८ में अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति के दो भाग कर दिये। दातव्य धन देकर जो शेष बचा उसका आधा पुत्रों के नाम और आधा सभा के नाम कर दिया। स्वयं तन-मन से आर्यसमाज की सेवा में लग गये।[६] **पं. श्यामलाल जी** आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद के प्रधान थे। बीदर काण्ड के सम्बन्ध में हत्या के अभियोग में गिरफ्तार हुए। बीमार थे। पाँव में बेड़ियाँ डालकर पटक दिया, मुलाकातें बन्द कर दीं। १७ दिसम्बर १९३८ को उनका जेल में ही यातनाओं के कारण देहान्त हो गया।[७]

नहटौर के चौ. चुन्नीसिंह जी, जिला **सहारनपुर के बाबू मिट्ठनलाल खन्ना, राजपुर नवादा के चौ. फतेहसिंह** और **बिजनौर के चौ. शेरसिंह जी** के सहयोग एवं प्रयत्न से **जिला बिजनौर, नजीबाबाद के निवासी मुंशी अमनसिंह जी** ने गंगा तट पर बसे काँगड़ी ग्राम की १४०० बीघा भूमि गुरुकुल के लिए दान कर दी, उसके बाद हजारों रुपये की धनराशि भी दी। हाथरस कन्या गुरुकुल के लिए **हाथरस के दानवीर सेठ मुरलीधर जी** ने १९१४ में भूमि खरीदकर दी तथा एक लाख की सम्पत्ति से भवन निर्माण कराया। १२ वर्षों तक संस्था बन्द रही। २६ जुलाई १९३१ को माता लक्ष्मी देवी जी के परिश्रम से पुनरुद्धार होकर पुनः गुरुकुल संचालित हुआ। **हाथरस के राजा महेन्द्रप्रताप जी** ने वृन्दावन के समीप की अपनी भूमि और बने हुए मकान गुरुकुल वृन्दावन के लिए दान कर दिये।[८]

सेठ रग्घूमल लोहिया ने कन्या गुरुकुल खोलने के लिए १९१२ में एक लाख रुपये दान दिये। गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के लिये एक लाख रुपये दान दिये। १९१८ में गढ़वाल इलाके में अकाल पड़ा, आर्यसमाज ने सहायता कार्य प्रारम्भ किया, सेठ रग्घूमल लोहिया ने ३००० की राशि दी तथा सूचना दे दी कि जब तक गढ़वाल में आवश्यकता रहे और धन की कमी मालूम हो तब तक दो हजार रुपये मासिक सहायता भेजते रहेंगे। **आचार्य रामदेव जालन्धर छावनी** के हाई स्कूल की हैडमास्टरी छोड़ निर्वाह मात्र पर गुरुकुल काँगड़ी गये। **डॉ. सुखदेव जी** ने दो वर्ष के गृहस्थ जीवन के बाद पत्नी की मृत्यु के पश्चात् पुनर्विवाह नहीं किया बल्कि अपनी चलसम्पत्ति गुरुकुल काँगड़ी को दान कर चिकित्सक के तौर पर गुरुकुल आ गये।[९]

१८६९ में जन्मे **नारायण प्रसाद** २२ साल की अवस्था में मुरादाबाद के कलेक्टर के दफ्तर में क्लर्क पद पर नियुक्त हुए। संस्कृत नहीं जानते थे तो वहीं के पण्डित कल्याणदत्त जी से अष्टाध्यायी पढ़ने लगे। 'मुहर्रिक' साप्ताहिक पत्र निकाला, दायें अगूठे में पीड़ा-रोग हो गया तो बायें से लिखना शुरु कर दिया। मुरादाबाद के कलेक्टर ने नया पद देना चाहा, मना कर दिया। शुद्धियाँ करायीं, कुछ सभासदों का विरोध होते हुए भी शुद्ध हुए पं. श्रीराम के हाथ से पानी पीया। दमन शुरु हुआ, परिवार के लोगों को कुएं पर चढ़ने से रोक दिया। पर हिम्मत नहीं हारी। गुरुकुल वृन्दावन का कार्य करने के लिए सरकारी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। ऐसे थे हैदराबाद सत्याग्रह के प्रथम सर्वाधिकारी **श्री नारायण स्वामी जी महाराज**। १९२३ में सार्वदेशिक के प्रधान बने। मथुरा की श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी, टंकारा जन्म शताब्दी, अजमेर निर्वाण अर्ध शताब्दी उनके ही कार्यकाल में भव्यता से मनायी गयीं।[१०]

सन् १९०५ में **भाई परमानन्द** जी २७ वर्ष की उम्र में दक्षिण अफ्रीका गये, प्रचार का दीप जलाया, अन्य जगहों पर भी गये। पंजाब में क्रान्तिवाद के मुखिया बनकर कोपभाजन बने, काले पानी की जन्मभर कैद भेजे गये। इनके चचेरे भाई नौजवान **बालमुकुन्द** लाहौर षड्यन्त्र केस में पकड़े गये-फाँसी का हुक्म हुआ। नवविवाहिता पत्नी को पता चला कि पतिदेव को फाँसी मिल गयी तो वे उठीं, स्नान किया, कपड़े-गहने पहनकर एक चबूतरे पर जा बैठीं और वहीं बैठे-बैठे प्राण त्याग दिये।[११]

'उन्नीसवीं सदी का महर्षि' पुस्तक के विरोध में 'रंगीला-रसूल' पुस्तक **महाशय राजपाल जी** के सरस्वती पुस्तकालय की ओर से प्रकाशित की गयी। पंजाब सरकार ने इस पुस्तक को छापने के अपराध में मुकदमा चलाया, पुस्तक जब्त कर ली। महाशय जी अभियोग में पहले तो कैद हो गये, परन्तु हाईकोर्ट से बरी हो गए। रंगीला-रसूल के लेखक पं. चमूपति एम.ए. थे, उनका नाम पुस्तक पर प्रकाशित नहीं हुआ था। अभियोग चलने पर भी महाशय राजपाल जी ने लेखक का नाम प्रकाशित नहीं किया। महाशय जी के बलिदान से तो कौन अपरिचित होगा।[१२]

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने अस्पृश्यता निवारण के कार्य की उपेक्षा को देखते हुए काँग्रेस की कार्यसमिति से स्तीफा दे दिया था तथा वर्किंग कमेटी से अलग हो गये। अमृतसर की काँग्रेस के स्वागताध्यक्ष पद से दिये गये भाषण में आपने कहा था,'' ...अपने हृदयों को मातृभूमि के प्रेमजल से शुद्ध करके प्रतिज्ञा करो कि...आज से वे साढ़े छह करोड़ हमारे लिए अछूत नहीं रहे बल्कि हमारे लिए बहिन और भाई हैं। उनके पुत्र और उनकी पुत्रियाँ हमारी पाठशालाओं में पढ़ेंगे। उनके गृहस्थ नर-नारी हमारी सभाओं में सम्मिलित होंगे...।''[१३]

दक्षिण अफ्रीका में आर्यभाषा के बीज बोने का श्रेय मुख्य रूप से **पं. भवानीदयाल जी** को है। सभी बड़े-बड़े शहरों में आपने हिन्दी प्रचारिणी सभाएं व पाठशालाएं खोलीं। १९१६ में आपके प्रयत्न से लेडी स्मिथ में सबसे पहला हिन्दी साहित्य सम्मेलन आयोजित किया गया। हिन्दू मुर्दे दबाने लगे थे, आपने वैदिक अन्त्येष्टि प्रथा को प्रचलित किया। १९१३ के सत्याग्रह में पति-पत्नी (**श्रीमती जगरानी देवी**) दोनों कारावास गये। आप कट्टर आर्यसमाजी व पक्के राष्ट्रवादी थे। भारत लौटने पर अजमेर में 'आदर्शनगर' की स्थापना की।[१४]

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के बलिदान-दिवस पर हैदराबाद में एक सभा का आयोजन किया गया, जिन्हें इस सभा की अध्यक्षता करनी थी, सभा आरम्भ होने से कुछ समय पूर्व उन्होंने अध्यक्ष बनने से इन्कार कर दिया।

न्यायमूर्ति केशवराव हाईकोर्ट के जज बन चुके थे, स्थिति उनके सामने रखी गयी। उन्होनें स्वयं ही सभा की अध्यक्षता करने के लिए अपना नाम प्रस्तुत किया। अंग्रेजी सरकार से डरे नहीं। आर्यसमाज के **शास्त्रार्थ महारथी श्री इन्द्रजी वर्मा** ने सत्याग्रह किया, जेल हो गयी। ''मैं पब्लिक में सुन आयी री, सिंहन को जायो वर्मा'' गाती हुई उनकी पत्नी जन साधारण में जोश भर रहीं थीं। श्री इन्द्र वर्माजी की पत्नी भले ही जेल न गयीं हों, परन्तु जब पति कारावास में यातानायें झेल रहे थे तो वह घर में पिस रहीं थीं।[१५]

हैदराबाद सत्याग्रह के एक सर्वाधिकारी **पं. ज्ञानेन्द्र जी** को बड़ौदा राज्य की ओर से उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड भेजने के लिए चुन लिया गया, परन्तु वे नहीं गये। उपदेशक महाविद्यालय लाहौर में भर्ती हुए, शिक्षा प्राप्त की, आर्यसमाज के लिए उम्र लगा दी। हरियाणा के **स्वामी बेधड़क जी** आठ बार स्वाधीनता संग्राम में जेल गये। तत्कालीन मुख्यमन्त्री ने उन्हें विधानसभा का टिकट देना चाहा। स्वामी जी ने ठुकरा दिया, कहा ''मैं संन्यासी हूँ, दलगत राजनीति मेरे लिए वर्जित है।'' शाहपुरा के शासक सर नाहरसिंह ने **ऋषि भक्त महाशय देवकृष्ण** को महल क्रय करने के लिए बम्बई भेजा। वहाँ उन्हें दस हजार रुपये कमीशन में भेंट किये गये। आपने लौटकर यह राशि महाराज नाहरसिंह जी के सामने रख दी।[१६]

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उपदेशक महाविद्यालय लाहौर के आचार्य थे तो शनिवार को कहीं बाहर प्रचार के लिए जाया करते थे। रेलवे की टिकट खिड़की पर कुछ पैसे देकर बोले-टिकट दीजिए। बाबू ने पूछा-कहाँ का टिकट दूँ। बोले-इतने पैसे में जहाँ का टिकट बनता हो, बना दो, जहाँ भी पहुँच जाऊँगा, वहीं प्रचार कर लूँगा।[१७]

राहों जिला जालन्धर के **वीर चिरञ्जीलाल** की माता जी का देहान्त हो गया। पौराणिकों ने कहा कि चिरञ्जीलाल पाषाण-पूजा, भूत-प्रेत, जल-स्थल आदि तीर्थों, देवी-देवताओं तथा जाति-भेद, अस्पृश्यता का घोर खण्डन करता है, अत: अपने किये के लिए क्षमा माँगे तो इसकी माता की अर्थी को कन्धा दिया जा सकता है। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु के शब्दों में, ''चिरञ्जीलाल ने वही निर्णय लिया जो इतिहास-प्रवाह को चीरने वाले महापुरुष लिया करते हैं। चिरञ्जीलाल जी ने माता के शव को एक चादर में बाँध कर ऐसी गठरी बना ली, जैसी पंजाब में फेरी वाले बनाते हैं। इस गठरी को अपने पीछे बाँध लिया। महर्षि दयानन्द का अलबेला अकेला शव को पीठ पर लेकर चल पड़ा।''[१८]

मैं इन सब महापुरुषों का आग्रही हूँ। इन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार के लिए भरी जवानी लगा दी, उम्र खपा दी, जेल की यातनाएँ सहीं, लाठियाँ खायीं, मृत्यु को गले लगाया, लौकिक लाभों को तवज्जो नहीं दी, लोकैषणाओं को ठुकराया, सरकारों के कोप से नहीं डरे, नैतिकता के उच्च मापदण्ड कायम किये। समाज का विरोध सहा, पर रूढ़ियाँ तोड़ी। अपनी सम्पत्ति अपना सर्वस्व उपकार में लगाया, लाखों की जमीनें दान दीं, संकल्प किये व झंझावात सहकर भी पूरे किये, निडरता से सही को सही व गलत को गलत कहा, सस्ती लोकप्रियता के पीछे नहीं भागे, पदों का लालच उन्हें लुभा नहीं पाया। ऐसे असंख्य बलिदानी, जो चाहे इतिहास के पन्नों पर दर्ज न हो पाये हों, परन्तु उनके बलिदानों के कारण मैं उनके लिए आग्रही हूँ।

मुझे **आचार्य धर्मवीर जी** के प्रति आग्रही कहा जाता है। आचार्य धर्मवीर ने आर्यसमाज व परोपकारिणी सभा को सर्वस्व मानकर संस्थागत कोप झेला, वर्षों तक निलम्बित रहे, आर्थिक संकट में भी डोले नहीं, घर से ऋषि उद्यान पैदल आना मन्जूर पर सभा से रिक्शे का पैसा नहीं लिया। अपने किराये के घर में वर्षों सफेदी नहीं पर ऋषि उद्यान में कालिमा नहीं आने दी। पैसे की शुचिता इतनी कि विरोधी भी आरोप न लगा सके। सभा के प्रति दीवानापन इतना कि जहाँ जावें, पहले सभा की बात, बाद में कुशल मंगल। जहाँ पहले ऋषि बोधोत्सव पर ऋषि उद्यान में २० लोगों के लिए भी कूपन होते थे, वहाँ अब सैकड़ों लोगों के प्रतिदिन भोजन की व्यवस्था। आज ऋषि उद्यान में जिधर भी नजर दौड़ायें धर्मवीर का पुरुषार्थ खड़ा नजर आता है- केवल सरस्वती भवन को छोड़ दें- पं. लेखराम भवन, स्वामी ओमानन्द भवन, अनुसन्धान भवन, योग भवन, भोजनशाला, गोशाला, कार्यालय भवन, मुख्य द्वार, यज्ञशाला का पुनरुद्धार, - कौन सा ऐसा भवन है जो धर्मवीर के

समर्पण की स्मृति न करा रहा हो। परोपकारी पत्रिका की प्रसार संख्या व गुणवत्ता हो या उसके सम्पादकीय सबका श्रेय आचार्य धर्मवीर को ही है। सत्य के प्रति दृढ़ता इतनी कि जीवन पर बन आये तो भी सत्य का साथ तो छोड़ना नहीं, विद्वत्ता उच्चकोटि की पर अहंकार दूर तक नहीं, वक्तृत्व कला ऐसी कि श्रोता उन्हें ही उन्हें सुनना चाहें, लेख लिखें तो विद्वान् से लेकर जन सामान्य के हृदय में उतरता चला जावे।

प्रचार-प्रसार के लिए समर्पण इतना कि देहान्त से दो दिन पूर्व जब प्रचार कर रहे थे तो प्रचार के अन्तिम दिन उनसे पूरा वेदमन्त्र नहीं बोला जा रहा था, एक वाक्य एक बार में पूरा नहीं बोल पा रहे थे, फिर भी रुग्णता की पीड़ा को झेलते हुए प्रचार करते रहे। अजमेर रेलवे स्टेशन पर ट्रेन आकर रुकी तो ऋषि उद्यान के कार चालक उनकी प्रतीक्षा करते रहे, बाहर नहीं आये तो अन्दर जाकर देखा। किसी ने बताया उधर एक आदमी पड़ा है। किसी तरह से गोद में उठाकर डिब्बे से बाहर लाये, चलने की स्थिति थी ही नहीं, व्हील चेयर पर बैठकर स्टेशन से बाहर आये। अस्पताल गये, दो दिन बाद ही वापस आ गये, पर धर्मवीर नहीं उनका पार्थिव शरीर आया। बलिदान हो गये सभा व आर्यसमाज के लिए। इसलिए मैं उनका आग्रही हूँ, हाँ आग्रही हूँ तथा मुझे उनके प्रति आग्रही होने में गर्व है।

उनकी पत्नी श्रीमती ज्योत्स्ना जी ने परिवार की जिम्मेदारियों को पूरी तरह वहन करते हुए आचार्य धर्मवीर जी को पूरा समय सभा व आर्यसमाज के लिए उपलब्ध कराया। अपनी सन्तानों की परवरिश उन्होंने की, जिससे धर्मवीर जी आर्य सन्तानों के लिए कार्य करते रहें। उनके निधन के बाद वे चाहतीं तो अमेरिका जाकर अपनी बेटी के साथ रह सकती थीं। छोटी बेटी जोधपुर के प्रथम श्रेणी के धनाढ्य परिवार की वधू है-चाहतीं तो वहाँ जाकर रह लेतीं। एक बेटी बैंगलौर में अच्छी तरह से स्थापित तथा पूर्ण समर्थ है-उनके पास रहकर अपने पिछले कष्ट व पति के निधन का शोक कुछ कम कर सकती थीं। उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने अपने शोक व पीड़ा को परिश्रम से ढक दिया। सभा के काम में जुट गयीं। प्रातः सभा कार्यालय चली जाती हैं, भोजन भी वहीं लेती हैं, शाम को वापस ऋषि उद्यान आती हैं। उन्होंने सभा के कार्य को आचार्य धर्मवीर जी का कार्य मानकर अपने आप को आहूत कर रखा है। मानापमान पर ध्यान न देकर अपना पूरा समय निःस्वार्थ भाव से सभा को दे रही हैं। मैं माता ज्योत्स्ना 'धर्मवीर' के प्रति भी आग्रही हूँ। क्योंकि मैं और मेरे जैसे अनेक आर्य उस प्रत्येक समर्पित व्यक्तित्व के लिए आग्रही हैं, जो लोकैषणा का त्याग करके, कष्ट उठाकर वैदिक धर्म की सेवा में अपना सब कुछ बलिदान किये हुए हैं।

टिप्पणी

१. पं. गुरुदत्त विद्यार्थी-डॉ. रामप्रकाश

२-१४ आर्यसमाज का इतिहास ।.।।- पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति

१५-१८ तड़पवाले -तड़पाती जिनकी कहानी-श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. २३ से ३० मई, २०१८ - **आर्यवीर दल शिविर,** सम्पर्क- ०९४६००१६५९०

२. ०५ से १२ जून, २०१८ - **आर्य वीराङ्गना शिविर,** सम्पर्क- ०९४६००१६५९०

३. १७ से २४ जून, २०१८- **योग-साधना शिविर,** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

४. १६, १७, १८ नवम्बर २०१८- **ऋषि मेला,** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता
(१ से १५ अप्रैल २०१८ तक)

१. श्री देवमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर २. श्री अमरचन्द माहेश्वरी, अजमेर ३. श्री गौरव मिश्रा, अजमेर ४. डॉ. किशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर ५. श्री राजकुमार, दिल्ली ६. श्रीमती निमिषा भण्डारी, जोधपुर ७. श्री ज्ञानधातुक चन्द, मॉरिशस ८. राष्ट्रबन्धु शृंगी, कोटा ९. स्वामी देवेन्द्रानन्द, ऋषि उद्यान, अजमेर १०. श्रीमती अंजलि आनन्द, नोएडा ११. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषिउद्यान, अजमेर १२. आर्यसमाज, प्रेमनगर, करनाल १३. डॉ. मूलराम आर्य, करनाल १४. सुश्री राजबाला, बालन्द, रोहतक १५. मै. स्वस्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती १६. श्रीमती स्नेहलता, अम्बाला शहर।

परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता
(१ से १५ अप्रैल २०१८ तक)

१. डॉ. वेदप्रकाश, नई दिल्ली २. श्री शैलेन्द्र कुमार, मेरठ ३. श्री नरेश कुमार, अजमेर ४. डॉ. किशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर ५. श्री सन्तोष कुमार, पंचकुला ६. श्रीमती वीणा सहगल, जीन्द ७. स्वामी देवेन्द्रानन्द, ऋषि उद्यान, अजमेर ८. श्री विजयसिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान, अजमेर ९. श्री सीताराम आर्य, मेरठ १०. श्रीमती भँवरी देवी, अजमेर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

परोपकारी के सम्बन्ध में घोषणा

प्रकाशन - परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर

संपादक	-	डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा	**मुद्रक का नाम**	-	श्री मोहनलाल तँवर,
नागरिकता	-	भारतीय	**पता**	-	वैदिक यन्त्रालय, केसरगंज, अजमेर
पता	-	केसरगंज, अजमेर			
प्रकाशक	-	डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा	**प्रकाशन अवधि**	-	पाक्षिक
नागरिकता	-	भारतीय			
पता	-	परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर			

मैं, डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार सही है।

मई २०१८ **प्रकाशक : डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा**

आओ सुपथ पर चलें

प्रकाश चौधरी

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम।।

इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए कहा कि हे अग्ने प्रभु! हमें ऐश्वर्य पाने हेतु सुपथ पर ले चलो, सन्मार्ग पर ले चलो, आप हमारे हर कर्म और ज्ञान को जानते हो, कृपा करके आप हमारे हर पाप एवं कुटिलता को दूर कीजिये। हम आपको बारम्बार नमस्कार करते हैं।

परमात्मा ज्ञानवान है, प्रकाश पुंज है। वह ही हमारी तमाम कुटिलताओं को दूर कर हमें पवित्र बनाता है। हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है इसलिए प्रभु का एक सुन्दर नाम 'अग्नि' है। प्रकाशमय अग्नि प्रभु से सन्मार्ग पर ले चलने की प्रार्थना की गयी है, क्योंकि हर प्रकार का ऐश्वर्य चाहे वह सांसारिक हो अथवा आध्यात्मिक हो अर्थात् धन दौलत हो, सुख-सुविधा हो या फिर मोक्ष आनन्द हो, प्राप्त करने के लिए सुपथ एवं सन्मार्ग पर चलना आवश्यक है।

प्रभु अन्तर्यामी है। मन्त्र में कहा गया कि प्रभु हमारे हर कर्म को, हर विचार को, हर ज्ञान को जानता है। अच्छा-बुरा कुछ भी कार्य जो हम करने जा रहे हैं, उसी क्षण वह जान लेता है। उसके बिना और कोई दूसरा हमारे मन की बात को जानने के लिए सक्षम नहीं है। इसीलिए हम उसी से प्रार्थना एवं याचना करते हैं कि हे प्रभु! आप हमारी कुटिलताओं एवं पापों को हमसे दूर कीजिये।

परन्तु प्रभु हमारी प्रार्थना को, याचना को सरलता से स्वीकार नहीं करते। वह तो आत्मसमर्पण चाहते हैं। शुद्ध हृदय से निकली शुद्ध एवं पवित्र भावना से ओत-प्रोत याचना ही उन्हें स्वीकार्य है। अपने मन, मस्तिष्क तथा आत्मा को प्रभु के सम्मुख झुकाकर याचना करें तथा पाप कार्यों, दोषों को स्वयं प्रकट करते हुए, स्वीकार करते हुए, पश्चाताप करते हुए प्रार्थना करें तो परमात्मा हमारे सच्चे भावों को जानकर हमें अवश्य पवित्र करेंगे और सन्मार्ग पर ले जायेंगे।

हम किससे मांगते हैं? जिस पर हमें यह विश्वास होता है कि वह देने में समर्थ है। चाहे धन की आवश्यकता हो या फिर ज्ञान पाने की इच्छा या फिर और कुछ। हम ऐसे व्यक्ति से याचना करेंगे जिसके पास सामर्थ्य हो और आपकी पात्रता पर उसे विश्वास हो। इसी प्रकार प्रभु तो सामर्थ्यशाली है ही। प्रभु का सही पात्र बनने के लिए और उस पर पूर्ण विश्वास एवं आस्था बनाने के लिए प्रभु के गुणों एवं शक्तियों का ज्ञान पाना आवश्यक है। प्रभु के गुणों की तो सीमा ही नहीं। यदि कुछ थोड़े से भी गुणों का ज्ञान हो जाये तो हमारे अन्दर दिव्य भाव प्रवेश करते हैं और पवित्र भावनाएं तथा उद्‌गार प्रभु के सम्मुख उठने लगते हैं।

इस ब्रह्माण्ड में जो भी दृष्टिगोचर है- ये लोक-लोकान्तर, वनस्पति जगत्, प्राणीमात्र, सारी सुख-सुविधाएँ, नदियाँ, पर्वत कुछ भी अर्थात् जो भी दृष्टि में आता है सब उस ईश्वर की देन है। यह जगत् उसी का बनाया और बसाया हुआ है। प्रभु सर्वशक्तिमान् है। उसी के बल, सामर्थ्य, ज्ञान से यह जगत् सत्ता में आता है। यह सब कुछ उसी का है। ईशोपनिषद् कहता है कि सारी सम्पदा उसी ईश्वर की है अतः त्यागभाव से इसका उपयोग करो, लालच मत करो। भूमि के गर्भ में छिपी सम्पदा कोयला, सोना, चाँदी, तेल, गंधक आदि ये वनस्पति, फल, फूल, जल, वायु, अग्नि, तमाम पशु-पक्षी, सागरों में छिपे रत्न, न जाने कितनी सम्पदा बिखरी पड़ी है। इस सम्पदा पर सभी का अधिकार है। दूसरे का हक छीनना पाप है। लालच-लोभ पाप है, आवश्यकता से अधिक संग्रह करना अपराध है। सारे प्राणी ईश्वर के लिए पुत्र-पुत्रियाँ हैं। सबका ध्यान रखना, अहंकार न करना, इन सब बातों को जो जान जाता है-वही सन्मार्ग पर चलने का पात्र है। ईश्वर उसे ही सुपथ पर ले जाते हैं।

यदि परमात्मा की कृपा पानी है तो ईशोपनिषद कहता है- ''मनुष्य को चाहिए कि वह कर्म करता हुआ सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे।'' अपने कर्त्तव्यों से विमुख होकर मनुष्य ईश्वर में नहीं रम सकता। सच्ची ईश्वर भक्ति तो यही है कि मनुष्य अपने कर्त्तव्यों को करता हुआ सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे। यही वेदों में विधान है। संसार में रहते हुए वर्ण-आश्रम के नियमों का पालन करें।

अपने प्रत्येक आश्रम के कर्त्तव्यों का ज्ञान हो। बिना

किसी राग-द्वेष के, फल की इच्छा न करते हुए, आसक्तिरहित होकर सात्त्विक कर्म करें। राजस और तामस कर्मों से दूर रहें। गीता में भी यही सन्देश है। जिसे कर्म-योग कहा है। अनासक्त होकर निःस्वार्थ भाव से किये गए कार्य के उपरान्त आशाजनक फल न मिलने पर व्यक्ति चिन्तित एवं व्याकुल नहीं होता। क्योंकि वह जानता है कि उसका कार्य तो कर्म करना है, फल देना ईश्वर का काम है। बिना अहम् के जीना तथा कर्त्तव्यों के प्रति उदासीन न होना ही सन्मार्ग पर चलना है, सुपथ पर चलना है।

ये भी सत्य है कि कर्त्तव्य-कर्मों के साथ-साथ अध्यात्म अपनाना भी उतना ही आवश्यक है। आत्मा-परमात्मा का बोध, जन्म-मरण, पुनर्जन्म की सत्यता, मनुष्य जीवन का लक्ष्य-इनका ज्ञान पाना भी आवश्यक है। परमात्मा की स्तुति-प्रार्थना-उपासना से ही अपने मन, बुद्धि तथा आत्मा को पवित्र किया जा सकता है। सबके हृदय में उस प्रभु का स्थान है। वही उत्तम कर्म करने की प्रेरणा देता है और अशुभ कर्म करते समय चेतावनी देता है। कर्त्तव्यों को करने के साथ-साथ आत्मा के स्वरूप को जानना, उसे ब्रह्म में लीन करना हमारे जीवन का लक्ष्य है। अतः कर्मयोग और अध्यात्म-योग का समन्वय ही उत्तम जीवन जीने की कला है।

जो मनुष्य केवल सांसारिकता में विश्वास करते हैं, प्रकृति की ओर ही दौड़ते हैं, परमात्मा की आवाज़ नहीं सुनते हैं, वे आत्मघाती बन जाते हैं, पाप कर्मों में लीन रहने लगते हैं। उनका जीवन लक्ष्य केवल खाना-पीना, मौज करना ही रह जाता है। फिर उन्हें न सन्मार्ग मिलता है, न सुपथ। वे निम्न स्तर की योनियों के अधिकारी बन जाते हैं। असुर्य लोक को प्राप्त करते हैं।

इसलिए उपनिषद तथा वेद और गीता में निर्देश है कि व्यक्ति को यदि दोनों प्रकार के आनन्द अर्थात् सांसारिक आनन्द तथा मोक्ष आनन्द पाना है तो ईश्वर की ओर चलो, उसके आदेशों का पालन करो। परमात्मा चारों ओर व्यापक है, तेजस्वी है, कायारहित है, शुद्ध बुद्ध-मुक्त है। वह पापियों को दण्ड देता है, वह न्यायकारी है, कल्याणकारी है। दण्ड देकर वह व्यक्ति के क्लेशों को दूर करता है, मानो उसका कल्याण करता है और सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। वह सर्वत्र-सर्वव्यापक है। सभी के शुभ-अशुभ कर्मों को जानता है। वह तेजोमय है। उसी के प्रकाश से ये सारे लोक, सूर्य, तारे, अग्नि, विद्युत् प्रकाशमान हैं। निराकार होते हुए भी उसके होने का एहसास होता है। उसका एहसास ही व्यक्ति को निर्मल तथा शुद्ध बना देता है और सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। प्रभु सर्वशक्तिमान है।

कुछ भी करने के लिए उसे किसी के सहारे की आवश्यकता नहीं होती। वह अद्भुत रचनाकार है। उसकी सृष्टि में नियमबद्धता अनुपम है। हर वस्तु, प्राणी अपने स्थान पर अपने-अपने कर्त्तव्यों में गतिशील है। प्रभु की सृष्टि में छोटा-बड़ा, सूक्ष्म-स्थूल सब अपना-अपना अस्तित्व रखते हैं। प्रभु यम है-नियन्त्रण करता है। पूषा है-सभी की पुष्टि करता है। न जाने वह क्या-क्या है? वह न सीमा में समाता है, न संख्या में, न ओर है न छोर है, न आदि है न अन्त है। वह पूर्ण है। उसकी प्रत्येक रचना उसके अद्वितीय एवं कल्याणकारी रूप को दर्शाती है। उसका प्रत्येक कार्य कुछ न कुछ सन्देश देता है। उसके दिए सन्देशों पर हम विचार करें, उनका मनन करें और जीवन में उतारें-यही सन्मार्ग है सुपथ है।

प्रभु की आज्ञाओं का पालन ही सन्मार्ग पर चलना है। ईश्वर से इसी पर ले चलने की याचना इस मन्त्र में की गयी है। ईश्वर को जानकर उसकी शक्तियों को पहचानकर उसकी स्तुति, प्रार्थना, उपासना करते हुए हमें दोनों ऐश्वर्य पाने का प्रयत्न करना है। सांसारिक सुख तथा मोक्ष-आनन्द हमारे कर्मों तथा ईश्वर में विश्वास पर आधारित है। अपनी आत्मा को शुद्ध कर उसे परमात्मा के आनन्द में लीन करें। यह शरीर तो मरणधर्मा है। आत्मा अमर है-इसका विवेक करें। उपनिषद कहता है ''हे कर्मशील-प्रज्ञाशील मनुष्य, तू ओ३म् का स्मरण कर, अपने कृतकर्म का स्मरण कर।'' ओ३म् की महिमा बताते हुए कहा कि यह ही प्रभु का निज एवं सुन्दर नाम है। यह परमात्मा का पर्यायवाची है। इसके तीन अक्षरों अ, उ, म् में प्रभु नाम अन्तर्निहित है। सारे लोक, सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, अग्नि, जल, वायु सब ओ३म् में हैं। उसी नाम के स्मरण से मनुष्य धर्म, अर्थ, काम का पुरुषार्थ कर मोक्ष आनन्द को पाता है। अन्त में कर्म और अध्यात्म ज्ञान का समन्वय ही मनुष्य का सन्मार्ग पर चलना है। मन्त्र में यही याचना की गयी है।

पाठकों की प्रतिक्रिया

१. श्रीमान् सम्पादक, पूज्य डॉ. धर्मवीर जी के नेतृत्व में परोपकारी पत्रिका ने बड़ी प्रगति की है। उनकी लगन और अथक प्रयास से यह पत्रिका मासिक से पाक्षिक पत्रिका के रूप में परिवर्तित हो गई। इसमें छपे लेख, सम्पादकीय, शंका समाधान तथा अन्य जानकारी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती हैं। आर्यजगत् में इतनी सुन्दर और व्यवस्थित अन्य पत्रिका नहीं है, परन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि डॉ. धर्मवीर जी के न रहने से इसके वितरण में कठिनाई हो रही है। मुझे तथा मेरे अन्य मित्रों को भी लगभग डेढ़ वर्ष में ३-४ पत्रिकाएँ ही प्राप्त हो पाई हैं। मेरा कहने का आशय यह है कि परोपकारी पत्रिका के प्रेमियों को यह पत्रिका नियमित पहुँचनी चाहिए।

रामसिंह आर्य, मेरठ, उ.प्र.।

टिप्पणी -श्रीमान् रामसिंह आर्य जी, आपको परोपकारी की प्राप्ति में होने वाली असुविधा से हमें खेद है। यद्यपि इसमें डाक विभाग भी एक बड़ा कारण है, पुनरपि हम इसे और अधिक व्यवस्थित करने का पूर्ण प्रयास करेंगे। आप इसी प्रकार हमारा उत्साह बढ़ाते रहें। आपकी आर्यसमाज के लोग यदि सभी पत्रिकाएं समाज में मंगवाना चाहें तो हम वहाँ इकट्ठी भेज देंगे, परन्तु सभी इसके लिये सहमत नहीं हो पाते। **-सम्पादक**

२. माननीय सम्पादक जी, सादर नमस्ते! आपकी परोपकारी पत्रिका के अंक मार्च द्वितीय २०१८ को यदि आर्यसमाजियों के लिए कर्त्तव्यनिष्ठ होने और स्वामी दयानन्द जी के उद्देश्य को पूरा करने के लिए उत्साह भरने का अंक कहा जाये तो इसमें कोई गलती न होगी।

इस अंक में आपका सम्पादकीय 'महर्षि स्वामी दयानन्द और उनका वेद प्रचार', 'आर्यसमाज का स्थापना दिवस' लेखक पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय, 'समितिः समानी' द्वारा तपेन्द्र वेदालंकार जी और 'आर्यसमाज का जन्म और जीवन यात्रा' द्वारा श्री रामनिवास गुणग्राहक आदि लेखकों ने आर्यसमाजियों को जागृत होकर सक्रिय कार्य करने का सर्वमाननीय सन्देश दिया है।

मेरा हर परोपकारी पाठक से आग्रह है कि लेखकों के सुझावों को मन से स्वीकार लें और अपने स्तर पर क्रियान्वयन करने में देरी न करें। आज जिस राजनीति और युवकों के बिगड़ने पर देश स्थित है, देश और धर्म पतन से बच जायेगा।

सभी आर्य संस्थाओं की बिगड़ती स्थिति को सुधारने के लिये दिल और दिमाग से भेदभाव मिटाकर सुधार कार्य में लग जाना चाहिये।

डॉ. कृष्णलाल डंग, पांवटा साहिब

३. परोपकारी मार्च द्वितीय-२०१८ प्राप्त हुई। इसमें आपका सम्पादकीय लेख 'महर्षि दयानन्द और उनका वेद प्रचार' वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बहुत प्रेरणास्रोत है। इसमें आपका सुझाव ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के विषयों को आधार मानकर यदि आर्ष विद्वद्वर्ग छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ तैयार करें और आर्य संस्थाएँ यदि उनको महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में निःशुल्क वितरित करें तो शायद हम वेद-प्रचार की दिशा में सार्थक पहल कर सकें। मेरा सुझाव तो यह भी है कि विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों के अतिरिक्त अन्य संस्थाओं इन्टर व हाईस्कूल, प्राथमिक विद्यालयों तथा आम जनता में निःशुल्क वितरित करें। मैं यह देखता हूँ कि ईसाई व मुस्लिम धर्म के लोग अपनी छोटी-छोटी पुस्तकें मौहल्लों व घरों में निःशुल्क बाँटते फिरते हैं। मैं यह देखता हूँ कि आर्यसमाज की आर्ष पुस्तिकायें जो काफी छोटी होती हैं उनकी कीमत बहुत होती है। इसलिये व्यक्ति उनको नहीं खरीद पाते हैं। आपका उक्त सुझाव बहुत ही अच्छा है।

मैं आर्यसमाज के साप्ताहिक कार्यक्रमों में जाता हूँ। इनमें यज्ञ में जो यजमान बनाये जाते हैं उनको ध्वज व सत्यार्थप्रकाश की पुस्तकें तो दे देते हैं, परन्तु यह नहीं बताते हैं कि आर्यसमाज क्या है? इसकी स्थापना कब और क्यों महर्षि ने की।

पत्रिका में सभी लेख अच्छे और प्रेरणास्रोत हैं। प्रो. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' जी का 'कुछ तड़प-कुछ झड़प' लेख पाठकों को आर्यसमाज और इनके विद्वानों और विभिन्न घटनाओं के विषय में ज्ञान कराते हैं। आर्यसमाज के कार्यक्रमों

तथा दैनिक और साप्ताहिक यज्ञों में युवा वर्ग के व्यक्ति नहीं आ पाते हैं। अधिकांश परिवारों में पोंगा पण्डितों तथा सनातनियों का प्रभाव है।

पं. उम्मेदसिंह विशारद का लेख 'कुरीतियों का कुचक्र तोड़ना ही होगा'। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अति आवश्यक है।

लक्ष्मण सिंह, मुजफ्फरनगर।

४. स्व. डॉ. धर्मवीर जी हमारे गुरु थे। अनेकत्र प्रचार यात्राओं में उनका स्नेहिल सान्निध्य पाने का अवसर मुझे मिला। वे यावज्जीवन ऋषि-मिशन को पल्वल्ति पुष्पित करते रहे। उनके रोम-रोम में वैदिक निष्ठा एवं दयानन्द ध्येय मुखर हो उठते थे। परोपकारिणी सभा हो या 'परोपकारी' दोनों को अन्तर्राष्ट्रिय महत्त्व दिलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। उनकी लेखनी जैसी निर्बाध चलती थी वैसी उनकी वाणी भी प्रवाहमयी थी। अगाध पाण्डित्य एवं सरल, सहज व्यवहार उनके जीवन में मणिकाञ्चन संयोग लगता था। अस्तु।

डॉ. साहब के जाने के बाद ऐसा लगता था कि पता नहीं अब 'परोपकारी' अपने वर्चस्व को अक्षुण्ण रख पायेगी अथवा नहीं, इस प्रकार की अनेक आशंकाएँ मन में उमड़ा-घुमड़ा करती थीं। किन्तु नहीं, आपने इस समय जिस प्रकार इसे सम्भाल लिया है मुझे लगता है परोपकारी की यशस्वी परम्परा को कोई आँच नहीं आने वाली। अपनी उसी क्षमता से दिगन्तव्यापी सिद्ध होती रहेगी।

मैं पिछले २००३ से छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मुख-पत्र 'अग्निदूत' का सफल सम्पादन विद्वानों एवं भद्रजनों के स्नेहपूर्ण सहयोग से करता आ रहा हूँ। कार्यालय में लगभग ३० पत्र-पत्रिकायें आर्यजगत् की व बाह्यजगत् की निरन्तर आती रहती हैं। सप्ताहान्त प्रवास के दौरान यथावसर इन्हें पढ़ने का प्रयास करता हूँ, परन्तु परोपकारी को आद्योपान्त पढ़ता हूँ। बाकी पत्रिकाएँ रोचकता एवं उपयोगिता के आधार पर सरसरी निगाह से पढ़ता हूँ किन्तु परोपकारी के हर पन्ने पर मेरा ध्यान जाता है। अभी फरवरी २०१८ के पृ. २० पर प्रकाशित 'हम ऋणी हैं' पढ़कर मेरी आंखों में आंसू आ गए। चौबीसों घण्टे परोपकाररत उस अकिञ्चन संन्यासी को वेदधर्म के उत्थान के लिए कितनी अमानवीय यातनाओं से गुजरना पड़ा था, उनकी सदाशयता से प्रभावित जिन लोगों को उनकी सेवा का अवसर मिला, सचमुच वे जन कितने सौभाग्यशाली रहे होंगे, निश्चय ही वे आत्माएँ भी बड़े पुण्य करके आईं थीं, कष्ट के क्षणों में जिन्होंने दयानन्द का साथ दिया था। मथुरावासी अमरलाल जोशी का नाम जहन में उठते ही पता नहीं क्यों बरबस मुझे रोना आ जाता है। आखिर क्या बोलकर दयानन्द ने अनुरोध किया होगा? मैंने सुना है जिस छोटे से कमरे में वह जोशी जी के यहाँ रहते थे वह साढ़े ६ फीट के दयानन्द के लिए पर्याप्त नहीं था, खैर।

आचार्य कर्मवीर, सम्पादक 'अग्निदूत' दुर्ग (छ.ग.)।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

पाठकों के विचार

१. सम्पादक जी! जनवरी द्वितीय २०१८ का परोपकारी पत्र मिला। ब्रिगेडियर चितरंजन सावन्त, वी.एस.एम. जी का लेख पढ़ा, डेढ़ पृष्ठ की सामग्री पुस्तकाकार मांगती है। ऐसा लगता है यदि राजा, महाराजा, पंडित, पुरोहित और देश के सभी साधारण जन को भी युद्ध में हथियार चलाने का प्रशिक्षण मिला होता तो भारत पहले ही आजाद हो जाता। सन् सत्तावन के संघर्ष में महर्षि भूमिगत या पता नहीं कहाँ थे। पर कुछ सुरागों से ऐसा लगता है कि स्वामी दयानन्द जी जी-जान से लोगों को जगाने की कोशिश कर रहे थे, पर लोगों की नींद खुली नहीं, पंडित, पुरोहित कहते थे कि उनका काम मन्दिर की रखवाली करना है। मूर्तियों को सेवा करके उनकी रक्षा करनी है, देश की आजादी कोई मायने नहीं रखती। उन्हें विश्वास था कि मन्दिर की मूर्ति रक्षा करेगी। दुश्मन आये, मूर्तियाँ तोड़ीं, मन्दिर तोड़े। मारकाट कर चले गये। शिवजी और अन्य भगवान् मुँह ताकते रह गये। महर्षि ने तो पूरी कोशिश की।

दूसरी बात, वैश्य लाभ-हानि देखता रहा, ब्राह्मण पाठ पढ़ाता रहा, शूद्र को तो युद्ध क्या है नाम ही पता नहीं था। वेतनभोगी पच्चीस प्रतिशत सैनिक क्या करते। नतीजा सामने है। महर्षि ने कहा था भारत की आजादी १०० साल पीछे हट गयी। पूरी जनता का सहयोग मिला होता तो देश सोने की चिड़िया बना रहता। भारत को अपनी गलती का फल भुगतना पड़ा था। फिर भी भारत की आजादी में महर्षि का जबरदस्त हाथ अवश्य है। **-सोनालाल नेमधारी।**

२. सम्पादक जी! देश का चारित्रिक पतन बड़ी तेजी से हो रहा है- इस माहौल में आर्यसमाज भी गिरफ्त में है- प्रतिनिधि सभाएँ भी मात्र औपचारिकता ही निभा रही हैं- विद्यालयों में अपरा तो कुछ-कुछ है, किन्तु परा विद्या का नामोनिशान भी नहीं है, यहाँ तक कि गुरुकुलों में भी। मैं क्या करूँ? यह जानते हुए क्या इस दुर्दशा को सहन करता रहूँ?

मान्यवर, मैं आज के दिन ८५ वर्ष पूरे करके २९ वें दिन में प्रवेश कर रहा हूँ। मैंने आपकी पत्रिका का प्रात: ५:०० बजे १० वाँ, ११वाँ , १२ वाँ तेरहवाँ पृष्ठ पढ़ा, विचार आया कि देश को सुधारने के लिए पहले आर्यसमाज में जान फूँकी जाय। आज सब चलते-फिरते मुर्दा हैं, खूब पढ़े-लिखे अज्ञानी हैं, देखते हुए अन्धे हैं, खूब शोरशराबा है किन्तु बहरे हैं, यह कौम बढ़ती जा रही है। एक आशा बंधी थी कि सुराज्य आएगा, सदाचार फैलेगा, लोग संयमी बनने लगेंगे-स्कूल, कॉलेजों, गुरुकुलों में पराविद्या रचनात्मक तौर लागू होगी, किन्तु सारी आशाएं धूमिल होती जा रही हैं।

श्रीमान् जी, मैं संसार का सबसे छोटा वेदप्रचारक हूँ। पिछले ६०-७० वर्षों से लगा हुआ हूँ और इस आयु में इतनी उमंग है कि इस भूमि को उलट कर रख दूँ और सारे नेताओं में वह ज्ञान भर दूँ, जो इनमें होना चाहिए। मैंने किसी पत्रिका में पढ़ा है कि स्वामी जी ने राजनीति को धर्म का अंग माना है, तो राजनीति का शुद्धिकरण करने का बीड़ा उठाऊँ।

होशियार सिंह, नाहटी, सोनीपत (हरियाणा)

ऋषि दयानन्द ने कहा था

सत्य और असत्य क्या है?

जो-जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों से अनुकूल हो वह-वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य है। जो-जो सृष्टिक्रम से अनुकूल वह-वह सत्य और जो-जो सृष्टिक्रम से विरुद्ध है वह-वह सब असत्य है, जैसे कोई कहे कि बिना माता-पिता के योग से लड़का उत्पन्न हुआ ऐसा कथन सृष्टिक्रम से विरुद्ध होने से सर्वथा असत्य है। **(स. प्र. स. ३)**

उन्नति का कारण सत्योपदेश

जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। **(स. प्र. ३)**

संस्था-समाचार

जन्मदिन, विवाह वर्षगाँठ पर यज्ञ- ऋषि उद्यान की यज्ञशाला में ३ अप्रैल को श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर' के जन्मदिवस पर उनकी सुपुत्री व दामाद निमिषा और त्रिदीप राजभंडारी, जोधपुर ने अतिथियज्ञ के होता के रूप में यज्ञ किया। ७ अप्रैल को गौरव-चित्रा के विवाह वर्षगाँठ के अवसर पर पिता नवीन मिश्रा एवं माता श्रीमती सुमन मिश्रा ने यज्ञ किया। १३ अप्रैल को स्वामी देवेन्द्रानन्द ने अपनी पत्नी श्रीमती अमृतरानी के जन्मदिवस पर यज्ञ किया।

अतिथि- अजमेर नगर में केसरगंज स्थित ऐतिहासिक महर्षि दयानन्द आश्रम, अनुसन्धान भवन एवं वैदिक पुस्तकालय, ऋषि निर्वाण स्थल-भिनाय कोठी, ऋषि उद्यान स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय, महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल आदि देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलकर शंका-समाधान करने, उपदेश ग्रहण करने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, पुष्कर आदि पर्यटन स्थलों में भ्रमण एवं आर्यसमाज के प्रचार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, ब्रह्मचारी, आर्यवीर, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता, गृहस्थ स्त्री-पुरुष और बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। सभी आगन्तुकों के निवास एवं नाश्ता, भोजन, दूध आदि की समुचित व्यवस्था ऋषि उद्यान में उपलब्ध रहती है। पिछले १५ दिनों में रोहतक, पुष्कर, दिल्ली, गुड़गाँव, चंडीगढ़, रोजड़, बीकानेर, सारंगसर, गोवा, सरवाड़, झाँसी, करनाल, डीसा, उज्जैन, चुरू, जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, गाजियाबाद, भटीन्डा, बंगलौर आदि स्थानों से ६९ अतिथि आये। इसी क्रम में मॉरीशस से श्री धुनूक चन्द जी ऋषि उद्यान पधारे।

दैनिक प्रवचन-प्रातः कालीन सत्संग में स्वामी विष्वङ् परिव्राजक ने प्रवचन में धारणा से ध्यान एवं ध्यान से समाधि के विषय में चर्चा की। आचार्य सत्येन्द्र आर्य ने वेद और ईश्वर के विषय में व्याख्यान किया। सोमवार से शुक्रवार तक सायंकालीन सत्संग में आचार्य सत्येन्द्र आर्य ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का पाठ एवं व्याख्यान किया। मॉरीशस निवासी श्री धुनूक चन्द ने मॉरीशस तथा अन्य देशों में आर्यसमाज की गतिविधियों की जानकारी दी। शनिवार सायंकालीन प्रवचन में ब्र. उत्तम ने भजन सुनाया, डॉ. नन्द किशोर काबरा ने कवितापाठ क्रिया और श्री सीताराम आर्य ने व्याख्यान दिया। रविवार प्रातःकालीन सत्संग में ब्र. उत्तम ने भजन सुनाया। सायंकालीन प्रवचन में ब्र. शिवनाथ आर्य और ब्र. विनोद ने अपने अपने विचार व्यक्त किये।

परोपकारी की इतनी लोकप्रियता

आर्यसामाजिक पत्रों में परोपकारी की लोकप्रियता की गौरवपूर्ण घटनायें आये दिन सामने आती रहती हैं। ये वैदिक पत्रिका आर्यसमाजेतर प्रबुद्ध वर्ग में भी चाव से पढ़ा जाता है। इसकी लोकप्रियता समस्त आर्यजगत् के लिये गौरव का विषय है। इसके कारण कई सुयोग्य समाजसेवी युवक आर्यसमाज से जुड़े हैं और जुड़ते जा रहे हैं।

अभी इन्हीं दिनों मेरठ के श्रीमान् आर्यमुनि जी अपना परोपकारी का अंक न मिलने की शिकायत लेकर डाकघर गये तो उन्हें बताया गया कि डाक में पत्रिकायें तो कई आती हैं, परन्तु परोपकारी ही एक ऐसा पत्र है, इसे जो कोई उठाता है पढ़ने के लिये ले लेता है, लौटाता नहीं। क्या करें? अन्य-अन्य नगरों से भी पत्रिका न मिलने के समाचार मिलते रहते हैं। कारण एक ही होता है। मेरठ में तो डॉ. वेदपाल जी का अंक भी उन तक नहीं पहुँचता था।

यह भी प्रतिक्रिया मिलती रहती है कि डॉ. धर्मवीर जी के पश्चात् भी पत्रिका का स्तर वही है जो पहले था। इसके लिये डॉ. दिनेश जी तथा उनके सब सहयोगी बधाई के पात्र हैं।

'परोपकारी' से जनता के इस लगाव के लिये हम परोपकारिणी सभा तथा समस्त आर्यजगत् को बधाई देते हैं। धर्मवीर जी ने प्रसार संख्या चार-पाँच सौ से पन्द्रह सहस्र तक पहुंचा दी, पाक्षिक से साप्ताहिक बना दिया। अभी ध्येयधाम बहुत दूर है।

स्वनामधन्य: श्री स्वामी भवानीदयाल संन्यासी

श्री वैद्य पं. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी

यह लेख 'परोपकारी' नवम्बर १९९२ के 'स्वामी भवानीदयाल संन्यासी जन्म शताब्दी विशेषांक' से लिया गया है। -सम्पादक

युगप्रवर्तक महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक ज्ञान और संस्कृति के पुन: प्रसार को ध्यान में रखकर शिक्षा की एक रूपरेखा भी प्रस्तुत की थी। उनके दृष्टिकोण को सामने रखकर आर्यसमाज के तत्कालीन नेताओं ने दो प्रकार के कार्यक्रम का अवलम्बन किया। परिणामस्वरूप महर्षि के नाम के कॉलेजों की स्थापना की। गुरुकुलों की स्थापना में इस विचार को प्रमुखता दी गई कि गुरुकुलों में अध्ययन करने वाले ब्रह्मचारी (छात्र) वैदिक साहित्य और संस्कृत के उत्तम ज्ञान के साथ आधुनिक ज्ञान और विज्ञान से भी सम्पन्न हों। वैदिक संस्कृति में उनका लालन-पालन हो और वे आदर्श रूप में जीवनयापन कर सकें। यह योजना वैदिक-संस्कृति के प्रेमीजनों के लिये विशेष आकर्षक और हृदयग्राही थी। फलत: उस समय गुरुकुलीय पद्धति का भी विशेष प्रचार हुआ।

नवम्बर १९१६ की बात है। महर्षि और आर्यसमाज के प्रति परम श्रद्धालु हमारे पूज्य पितामह श्री पं. बैजनाथ जी तिवारी, बाड़मेर ने हमें और हमारे छोटे चाचा श्री नित्यानन्द को गुरुकुल वृन्दावन में प्रविष्ट कराया। उस समय प्रवेश की स्थिति यह थी कि उस वर्ष १२७ बालक प्रवेश की इच्छा से वहाँ आए थे। यही नहीं, प्राय: प्रत्येक बालक के साथ माता-पिता और अन्य अभिभावक भी आए थे। गुरुकुल के विद्यालय भवन के सामने के मैदान में तम्बू लग गए थे। एक बड़ा मेला सा जुट गया था। बालकों की मानसिक, शारीरिक परीक्षाओं का क्रम ३ दिन चला। प्रवेश मिला केवल २० बालकों को। जिनके बालकों को यह सौभाग्य मिला उनके अभिभावक अपने आपको धन्य और कृतकृत्य मानते थे। हमारे साथ ही आचार्य श्री विश्वेश्वर, पं. वीरसेन विद्यार्थी, वैद्यवर नित्यानन्द त्रिपाठी और कविराज रत्नाकर शास्त्री को भी प्रवेश मिला था।

उन दिनों ब्रिटिश गयाना, फिजी, दक्षिण अफ्रीका, बर्मा और वर्तमान बंगलादेश आदि देशों से भी बालक गुरुकुल में प्रविष्ट होने के लिये आते थे। वृन्दावन गुरुकुल में मुख्याधिष्ठाता थे श्री नारायण प्रसाद जी- बाद में महात्मा नारायण स्वामीजी (सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान और आर्य सत्याग्रह हैदराबाद के संचालक)। लगभग दो-ढाई वर्ष के अनन्तर वे वानप्रस्थी होकर नैनीताल के पास रामगढ़ में आश्रम बनाकर साधना में लीन हो गए।

सन् १९१९ में, शीतऋतु के प्रात:काल का समय था। रात्रि की शीतल काली चादर शनै: शनै: विलुप्त हो रही थी। आश्रम के सामने ब्रह्मचारियों द्वारा बनाई हुई क्यारियों में खिले पुष्पों की सुहावनी सौवर्णी सूर्य किरणें अपने सुखद स्पर्श से गुदगुदा रही थीं। हम लोग उत्सुकतापूर्वक अपनी-अपनी क्यारियों में अभिनव खिली हुई कलियों को बाल-सुलभ प्रसन्नता के साथ देख रहे थे। ऐसे ही समय मैंने पहली बार श्री पं. भवानीदयाल के दर्शन किये। उस समय मैं लगभग दस वर्ष का ही था। फिर भी उस समय की श्री भवानीदयाल जी की छवि आज भी-लगभग ७५ वर्ष का समय बीत जाने पर भी मेरे सामने उसी प्रकार अभिनव बनी हुई है।

सिर पर अपने ढंग से बांधा हुआ श्वेत साफ़ा और शरीर पर काला, खुले कालर का कोट। पेन्ट संकड़ी ही थी और कुछ ऊँची। शरीर सामान्य हल्का-फुल्का। वाणी में कड़क। मुख पर दृढ़ता और आत्मविश्वास। वे उस समय दक्षिण अफ्रीका से अपने पुत्र ब्रह्मदत्त और अपने भाई श्री देवीदयाल के पुत्र कृष्णदत्त को गुरुकुल में प्रविष्ट कराने आए थे। इतनी दूर से आने के कारण वे सभी के आकर्षण के केन्द्र थे। जितने समय भी उन दिनों वे वहाँ रहे, लोग उनके सम्पर्क में आने के लिये उत्सुक रहते थे और उनका व्यवहार भी ऐसा था कि कोई भी उनसे एक बार मिलकर उन्हें भूल ही नहीं सकता था।

उनकी आर्यसमाज और उसके कार्यों में विशेष आस्था थी। यों कहना चाहिये कि वे एक दृढ़ एवं सक्रिय आर्यसमाजी थे। विचारपूर्वक उन्होंने ब्रह्मदत्त और कृष्णदत्त को गुरुकुल में शिक्षा दिलाने का निश्चय किया था। निश्चय

करने के अनन्तर उससे विमुख होने का उनके सम्मुख कभी प्रश्न ही नहीं उठता था। उनके हितैषी प्रेमी मित्रजनों ने उन्हें ऐसा न करने का परामर्श भी दिया। उस समय गुरुकुल तो शासन की विद्रोही संस्था माने जाते थे। इन संस्थाओं की शिक्षा की इतनी उपेक्षा की जाती थी कि इनके स्नातकों को सरकारी स्कूलों के चतुर्थ कक्षा उत्तीर्ण छात्रों के समान भी सुविधा नहीं प्राप्त हो सकती थी। उनके मित्रों ने उन्हें बहुत कहा कि इन बालकों को वे आधुनिकतम अच्छी एवं मान्यता प्राप्त किसी संस्था में प्रविष्ट करावें, परन्तु भवानीदयालजी ने उनकी सलाह स्वीकार नहीं की।

वस्तुत: महर्षि दयानन्द सरस्वती के उपदेशों से जो एक विशेष क्रान्ति हुई थी उससे शिक्षित वर्ग भारतीय समस्याओं के विषय में भारतीय पृष्ठभूमि में विचार करने लगा था। एक नये प्रकाश और उत्साह का जनता में आविर्भाव हुआ था। श्री भवानीदयाल जी ने यह स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि भारतीयों और विशेष रूप से प्रवासी भारतीयों का कल्याण और उन्नति इसी बात में निहित है कि वे भारतीय ऋषियों द्वारा दीर्घकाल से निरन्तर किये गये सत्य के परीक्षणों से समृद्ध की गई भारतीय संस्कृति को अधिकाधिक आत्मसात करें।

श्री पं. भवानीदयाल जी और उनकी सहधर्मचारिणी पत्नी श्रीमती जगरानी देवीजी ने उस समय ही यह समझ लिया था कि ब्रिटिश शासन में राजकीय विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा भारतीयों को अपनी संस्कृति से दूर ले जाने वाली है और उनके हित में नहीं है। इसलिये वे अपने बालकों की शिक्षा के लिये गुरुकुल वृन्दावन को ही उपयुक्ततम स्थान के रूप में देखते थे। अब, आज तो भारतीय शिक्षाशास्त्री एकरूप से ही यह विचार करने लगे हैं कि जो शिक्षा-पद्धति अंग्रेज शासक हमारे लिये उत्तराधिकार में छोड़ गये हैं, वह हमारे देश के लिये उपयुक्त नहीं है। उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन की आवश्यकता है, परन्तु वह परिवर्तन क्या हो और किस रूप में हो इसका निर्णय अधरझूल में ही है। कभी सोचा जाता है कि यह शिक्षा व्यवसायपरक होनी चाहिये, कभी कहा जाता है कि नवीन 'टेक्नोलॉजी' को आत्मसात् करने वाली होनी चाहिये, इत्यादि अनेक संशयात्मक विचार सामयिक परिस्थितियों के आधार पर प्रस्तुत किये जा रहे हैं। उनके अनुसार किया गया परिवर्तन भी सामयिक ही हो सकता है। उसका कोई ऐसा आधार नहीं है जो सार्वकालिक स्थायी रूप ले सके। हम समझते हैं कि यदि महर्षि दयानन्द सरस्वती के शिक्षा-सम्बन्धी विचारों का अध्ययन किया जा सके और आर्यसमाज द्वारा प्रवृत्त गुरुकुलीय शिक्षा की भावना पर उचित विचार किया जा सके तो हमारी शिक्षा का उचित रूप निश्चित किया जा सकता है।

प्रवेश के अनन्तर ब्रह्मचारी रामदत्त और कृष्णदत्त का नवीन जीवनक्रम प्रारम्भ हुआ। अफ्रीका में उनका जीवन किसी और रूप में ढल रहा था, अब गुरुकुल में नितान्त परिवर्तित रूप में प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में कष्ट सहिष्णु तपोमय जीवन में वे अपने आपको ढाल रहे थे। इसी बीच में सन् १९२२ में श्रीयुत भवानीदयाल जी की सभी स्थितियों में अनुगमन करने वाली, सहधर्मचारिणी वीराङ्गना श्रीमती जगरानीदेवीजी का देहावसान हो गया। इस अप्रत्याशित घटना से इन बालकों का उस वात्सल्यमयी माता की गोद से सदा के लिए बिछोह हो गया। इसका उनके ऊपर दु:खद एवं प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। कुछ वर्षों तक वे यहाँ अध्ययन तो करते रहे, परन्तु वे, सम्भवत: गुरुकुल के कठोर नियमों, यन्त्र के समान नियमित रूप से चलने वाली दिनचर्या तथा संस्कृत प्रधान पाठ्यक्रम के अनुकूल अपने आपको न ढाल सके। परिणामत: गुरुकुल छोड़कर चले गये। यह भवानीदयाली जी की इच्छा के प्रतिकूल ही हुआ। वे जिस प्रकार से इनको ढालने की इच्छा से गुरुकुल में लाए थे उनकी उस आकांक्षा की पूर्ति नहीं हो सकी, उससे उन्हें कुछ मानसिक दु:ख ही हुआ।

समय बीता। उनके दर्शनों का कई वर्षों तक सुअवसर नहीं आया। कभी समाचार-पत्रों से उनकी गतविधियों की कुछ झलक मिलती रही। सन् १९३० के अप्रैल मास में गुरुकुल विश्वविद्यालय की रजत जयन्ती मनाई गई। हमारा दीक्षान्त भी उसी समय हुआ था। श्री भवानीदयालजी हिन्दी के प्रखर ओजस्वी वक्ता और माने हुए प्रभावशाली लेखक थे। रजत जयन्ती के समय हिन्दी वाद-विवाद प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया था। उसमें हिन्दू विश्वविद्यालय, गुरुकुल विश्वविद्यालय हरिद्वार, आगरा विश्वविद्यालय, महाविद्यालय ज्वालापुर और हमारे गुरुकुल के छात्रों को भाग लेना था। हमें बड़ी उत्सुकतापूर्ण आशा थी कि

भवानीदयाली जी उस समय आएंगे और इस प्रतियोगिता को देखेंगे, क्योंकि प्रवासी भारतीय सम्मेलन का अधिवेशन भी उनकी अध्यक्षता में होना था, परन्तु वे नहीं आ सके और उनका भाषण प्रवासी भारतीयों के निकटतम मित्र एवं सहायक श्री पं. बनारसीदासजी चतुर्वेदी ने पढ़कर सुनाया। भाषण प्रतियोगिता का आयोजन गुरुकुल विद्या परिषद् द्वारा किया गया था। परिषद् महामन्त्री उस समय ब्रह्मचारी नित्यानन्द थे। प्रतियोगिता में इन पंक्तियों के लेखक को प्रथम स्थान प्राप्त हुआ और श्री रत्नाकर शास्त्रीजी को द्वितीय स्थान।

इस अवसर पर भवानीदयाल जी के न आ सकने का कारण यह था कि वे १९२९ में अफ्रीका से पुन: भारत आए। जिला शाहाबाद (बिहार) में कांग्रेस के कार्यों में भाग लिया। पूरे जिले का दौरा किया। संगठन में नवीन उत्साह का संचार किया। एक सहस्र सक्रिय स्वयंसेवकों का दल तैयार किया। १९३० में उन्हें गिरफ्तार करके दो वर्ष के कारावास का दण्ड दिया गया। तब यह कैसे सम्भव था कि वे उक्त सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए वृन्दावन आते।

१९४१ में वे दक्षिण अफ्रीका से स्थायी रूप से भारत में रहने के लिए आए और अपने निवास तथा कार्य के लिए अजमेर को ही सर्वाधिक उपयुक्त समझा। यहाँ आदर्शनगर में उन्होंने प्रवासी भवन का निर्माण कराया। भवन का निर्माण विशेष सुरुचि के साथ कराया गया था। इसमें दो खण्ड हैं। नीचे के खण्ड में पुस्तकालय और स्वागत कक्ष बनवाया गया। ऊपर के खण्ड में निवास की व्यवस्था की गई। भवन के पार्श्व में प्रवासी प्रेस का भवन और कर्मचारियों के लिए स्थान बनवाया गया। इसी प्रेस में 'प्रवासी' मासिक का मुद्रण होता था। आदर्शनगर में ही उन्होंने आर्यसमाज भवन का भी निर्माण कराया।

इस समय वे संन्यासी थे। धर्मपत्नी श्रीमती जगरानी देवी जी के देहान्त के बाद ही उन्होंने पुन: विवाह न करने का निश्चय कर लिया था, परन्तु मित्र और स्नेहीजन उनसे विवाह करने का आग्रह प्राय: करते रहते थे। इस स्थिति के प्रत्याख्यान के लिए उन्होंने संन्यास ग्रहण कर लिया था। अजमेर अगमन के समय ही उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था, परन्तु वे कर्मयोगी थे। उन्होंने प्रवासी भवन को प्रवासियों की सेवा का केन्द्र बनाया। प्रवासियों के पक्ष की उनकी समस्याओं और उनके लिए किये जाने योग्य कार्यों के विषय में भारत सरकार को सूचित करना आदि सभी कार्य यहाँ से ही करना उन्होंने अपना नियम बना लिया।

हम कांग्रेस के कार्यकर्त्ता थे। सरकारी कर्मचारी आदि कांग्रेस में भाग नहीं ले पाते थे। वे भी जहाँ तक हो भाग ले सकें, इस दृष्टि से हम लोगों ने राष्ट्रप्रेमी दल नाम के से एक स्थानीय संस्था का संगठन किया था। इन पंक्तियों के लेखक को उसके अध्यक्ष पद का कार्य भार सौंपा गया था। मन्त्री थे श्री रघुवीर प्रसाद यादव। १९४६ में राष्ट्रप्रेमी दल की ओर से ९ अगस्त का स्मृति दिवस मनाने के लिए सुभाष चौक, केसरगंज में सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। अध्यक्षता के लिए स्वामीजी से निवेदन किया गया। उस समय स्वामी जी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। अन्य कोई व्यक्ति होता तो स्वास्थ्य की उस दशा में कभी भी सभा में आने की स्वीकृति नहीं देता, परन्तु स्वामी जी ने हमारे निवेदन को प्रेम से स्वीकार किया और समय पर सभा में आए। सुभाष चौक का मैदान उस समय बड़ा था। श्रोताओं से खचाखच भरा था। मैदान में आने के मार्गों में भी भीड़ थी। कार्यक्रम बहुत सुन्दर, प्रभावशाली तथा उत्साह एवं उमंग बढ़ाने वाला था। स्वामी जी ने अपना भाषण लगभग ५० मिनट दिया। उनकी वाणी में जो कड़ँक और ओज था उसको देखकर कोई यही नहीं कह सकता था कि वे अस्वस्थ हैं। उनके इस भाषण का प्रत्येक शब्द श्रोताओं पर एक अविस्मरणीय प्रभाव छोड़कर गया।

समयानुसार स्वामीजी से मिलते रहने का अवसर मिलता रहा। १९४७ में हमें नगर कांग्रेस अजमेर के प्रधानमन्त्री का कार्य भार सौंपा गया। श्री कन्हैयालाल आर्य संयुक्त मन्त्री बने। श्री आर्य स्वामीजी के पास प्राय: आते रहते थे। स्वामी जी को दो कष्ट थे-संग्रहणी और श्वास रोग। उनकी चिकित्सा प्रसिद्ध एवं सिद्धहस्त चिकित्सक श्री डॉ. अम्बालाल जी शर्मा प्राय: करते थे। समय-समय पर हमें भी उनकी चिकित्सा के लिए जाना होता था। कठिनाई यह थी कि जो पथ्य श्वास के लिए उचित था वह संग्रहणी के प्रतिकूल पड़ता था और जो संग्रहणी के अनुकूल वह श्वास के प्रतिकूल, फिर भी चिकित्सा होती थी और दुर्बलता बढ़ती जाती थी। एक कठिनाई यह भी

थी कि प्रवासी भारतीयों की समस्याओं से सम्बद्ध किसी आवश्यक कार्य के आ जाने पर वे अपने स्वास्थ्य का प्रश्न भूल जाते थे। उनकी सेवा में रहने वालों के लिए ऐसे समय विषम समस्याओं के होते थे।

१९४७ में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नगर कांग्रेस के प्रधानमन्त्री होने के कारण हमारी कार्यव्यस्तता बहुत बढ़ गई। भारत का विभाजन होने के कारण पाकिस्तान से विस्थापितों का आगमन तीव्रता से हुआ। सिन्ध के लोग तो राजस्थान में ही आये और विशेष रूप से जोधपुर और अजमेर में। उनके निवास आदि की सुव्यवस्था और यहाँ से पाकिस्तान न जाने वाले मुसलमान लोगों की स्थिति को तात्कालिक साम्प्रदायिक रोष से बचाने का भी उत्तरदायित्व कांग्रेस पर ही विशेष रूप से निर्भर करता था। ऐसी स्थिति में हमारा स्वामीजी के यहाँ जाना विशेष परिस्थितियों में होने लगा। श्री कन्हैयालाल फिर भी उनके पास पहुँचते थे उनकी चिकित्सा आदि की व्यवस्था करते थे। स्वामी जी का उनके प्रति स्नेह होना स्वाभाविक था।

स्वामी जी के छोटे भाई श्री देवीदयाल के निधन के बाद से उनके परिवार का उत्तरदायित्व भी स्वामीजी पर ही आ गया था। श्री देवीदयाल की पुत्री कु. कलावती यहीं रहतीं थीं। स्वामी जी की सेवा में उनका समय व्यतीत होता था। एक प्रकार से रुग्णावस्था में स्वामीजी की परिचर्या का सर्वाधिक भार उन्हीं पर था। स्वामीजी को उनके परिणय की विशेष चिन्ता रहती थी। रोग के बढ़ने से उन्हें अपना जीवनकाल शीघ्र समाप्त होता दिखाई देने लगा। श्री कन्हैयालाल आर्य के पुत्र ओमप्रकाश उस समय बी.कॉम. के छात्र थे। अपने निधन से ७-८ दिन पूर्व स्वामी जी ने कु. कलावती का विवाह ओमप्रकाश से करने का विचार आर्यजी से किया। श्री कन्हैयालाल आर्य ने हमसे सब बात कही और सम्मति पूछी। हमने सब बात का विचार करके सम्बन्ध को बहुत उत्तम समझा और आर्यजी को अपने मन्तव्य से अवगत कराया। इस प्रकार आर्य जी की इच्छा और तदनुकूल हमारी सम्मति मिल जाने पर आर्यजी ने प्रसन्नता से इस सम्बन्ध को सादर स्वीकार किया।

फलत: एक दिन सायंकाल के समय श्री कन्हैयालाल आर्य, उनके पुत्र श्री ओमप्रकाश, नगर कांग्रेस के अध्यक्ष श्री ज्वालाप्रसाद, श्री रघुवीरप्रसाद यादव और हम आदर्शनगर में स्वामीजी के पास प्रवासी भवन पहुँचे। यही बारात-वरयात्रा थी। विवाह संस्कार का सब सामान तैयार था। स्वामी जी ने और आर्य जी ने संस्कार कराने के आचार्यत्व का भार हमें सौंपा। ईश्वर की कृपा से संस्कार पूरी वैदिक विधि से प्रसन्नतापूर्वक सम्पन्न हुआ। अस्वस्थ होते हुए भी रात्रि में ११ बजे तक स्वामीजी बैठे रहे। संस्कार समाप्त होने पर वर-वधू को आशीर्वाद दिया और अपने इस एकमात्र शेष उत्तरदायित्व के भार से मुक्त होने की शान्ति का अनुभव किया।

इसके अनन्तर वह दिन भी शीघ्र आ गया, जिसकी प्रतीक्षा स्वामीजी अपने जीर्ण वस्त्रों को छोड़ने के निमित्त कर रहे थे। यह दिन था ९ मई १९५० का। स्वामी जी की निर्वाण प्राप्ति के साथ ही प्रवासी भारतीयों के कल्याण के लिये और भारत की स्वतन्त्रता तथा अभ्युदय के लिये मन्त्रमुग्ध करने वाली और संघर्ष के लिये प्रेरणा देने वाली, ओजस्विनी वाणी सदा के लिए शान्त हो गई। अविश्रान्त रूप से चलने वाली प्रखर एवं प्रवाहमयी लेखनी ने भी विश्राम लिया।

स्वामीजी के पुत्र श्री रामदत्त यहाँ आकर रहे। उनका भी कुछ वर्ष पूर्व देहावसान हो गया। श्री ओमप्रकाश अहमदाबाद में आयकर विभाग में उच्च पद पर कार्य करते थे। अबसे दो तीन वर्ष पूर्व उनका भी शरीरान्त हो गया। वृद्धावस्था में भी कार्यक्षम श्री कन्हैयालाल आर्य पुत्र वियोग में ही एक वर्ष पूर्व भगवत् शरण में चले गए। श्रीमती कलावती अनने पुत्र एवं पुत्री सहित अहमदाबाद में ही रहती हैं। अजमेर में अब स्वामीजी के छोटे भाई श्री देवीदयालजी के पुत्र श्री विष्णुदत्त रहते हैं। अपने प्रेस का कार्य करते हैं और अपना मकान बना लिया है।

स्वनामधन्य श्री स्वामी भवानीलाल संन्यासी दक्षिण अफ्रीका में अपने महान् कार्यों, प्रवासी भारतीयों के हित-साधन, भारत में स्वतन्त्रता आन्दोलन में अपने महत्त्वपूर्ण सहयोग, हिन्दी की अप्रतिम सेवा और विकास कार्यों तथा परोपकार के उत्तम कार्यों से जो स्थायी लाभ देश को दे गये हैं, वह उनकी अक्षय कीर्ति के रूप में भावी पीढ़ियों का मार्गदर्शन सदा करता रहेगा।

''कीर्त्तिर्यस्य स जीवति।''

शङ्का समाधान - २४

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का- वृक्षों में जीव है या नहीं?

स्वामी जिलानन्द, बिजोपुर, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)

समाधान- जीव स्वकृत कर्मों के अनुसार उनके फलभोग हेतु एक देह से दूसरे देह अथवा एक योनि से दूसरी योनि को प्राप्त करता है। इस योन्यन्तर के सन्दर्भ में एक जिज्ञासा स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होती है कि क्या मनुष्य देह/शरीर के अनन्तर कोई जीव वृक्ष वनस्पति आदि में भी संचरण करता है? इस सम्बन्ध में शास्त्रीय पक्ष निम्नवत् है-

१. **सांख्य दर्शन** ५.१२१ में वृक्ष-वनस्पति-लता-औषधि आदि को भोगायतन कहा गया है। अर्थात् जीव द्वारा कृत कर्मों का भोग इन वृक्ष आदि में (वृक्षादि योनि को प्राप्त करके) भी प्राप्त होता है- **''न बाह्यबुद्धिनियमो वृक्षगुल्मलतौषधिवनस्पतितृणवीरुधादीनामपि भोक्तृभोगायतनत्वं पूर्ववत्।''**

२. **छान्दोग्य उपनिषद्** में उद्दालक श्वेतकेतु से कहते हैं-

क. ''अस्य सोम्य! महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्यात् जीवन् स्रवेत्। स एष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति''

- छा. ६.११.१

सोम्य! जो कोई (मनुष्य) इस महान् वृक्ष के मूल-जड़ में अभिहनन करे तो वह (वृक्ष) जीता हुआ रस गिराये, जो मध्य में अभिहनन करे तो वह जीता हुआ रसता रहे और जो अग्रभाग में अभिहनन करे तब भी वह जीता हुआ रसता रहे (पर वह सूखे वा मरे नहीं)। क्योंकि वह यह वृक्ष जीवात्मा (जीवेनात्मना) से परिपूर्ण है। इसी कारण पानी पीता हुआ हर्ष से रहता है।

ख. ''अस्य यदेकां शाखां जीवो जहात्यथ सा शुष्यति, द्वितीयां जहात्यथ सा शुष्यति, तृतीयां जहात्यथ सा शुष्यति सर्वंजहाति सर्वः शुष्यति। एवमेव खलु सोम्य! विद्धीति होवाच''-छा. ६.११.२

इस वृक्ष की जब एक शाखा को जीव छोड़ देता है तो वह सूख जाती है। दूसरी को छोड़ देता है तो वह सूख जाती है, तीसरी को छोड़ देता है, तो वह सूख जाती है और यदि जीव सारे वृक्ष को छोड़ देता है तो सारा वृक्ष सूख जाता है। सोम्य! निश्चय ऐसे ही मनुष्य शरीर को जान, क्योंकि-

जीवापेतं वाव किलेदं म्रियते न जीवो म्रियत इति

-छा. ६.११.३

जीव के न रहने पर ही यह मरता है, जीव नहीं मरता है।

३. मनु (१२.८) का कथन है कि शारीरिक कर्मदोष (चोरी, परस्त्रीगमन आदि) से वृक्षादि स्थावरता को प्राप्त करता है-

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम्।।

४. जीव के वृक्षादि योनि प्राप्त करने के सम्बन्ध में निम्न वेदमन्त्र विशेषेण द्रष्टव्य है-

क- सूर्यं चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः।।

- ऋ. १०. १६. ३

मन्त्र में जीव के कर्मानुसार उसे जीव को वायुकाय, जलकाय आदि योनियों के साथ ही ओषधियों में प्रतिष्ठित होने का वर्णन है। यही मन्त्र किञ्चित् पाठान्तर-चक्षुः/चक्षुषा, आत्मा/आत्मना, द्यां/दिवं, धर्मणा/धर्मभिः के साथ अथर्वः १८.२.७ तथा तैत्तिरीयारण्यक में भी उपलब्ध है। महर्षि दयानन्द ने इस मन्त्र को अन्त्येष्टि संस्कार में विनियुक्त किया है। आचार्य सायण ने अथर्वभाष्य में **मृतपुरुष के ओषधि-ब्रीहि यवादि में प्रतिष्ठित होने की बात कही है।**

ख- आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे मम।
ज्योक् च सूर्यं दृशे।। ऋ. १.२३.२१

मन्त्र का भावार्थ करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि-प्राणों के बिना कोई प्राणी या वृक्षादि शरीर को धारण नहीं कर सकते हैं। तद्यथा-

''नैव प्राणैर्विना कश्चित्प्राणी वृक्षादयश्च शरीरं धारयितुं शक्नुवन्ति...।''

ग- इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि... -यजु. ३५.१५

महर्षि दयानन्द उक्त मन्त्र का भाष्य करते हुए 'जीवेभ्यः' पद से प्राणधारक के साथ स्थावर शरीरधारक का भी ग्रहण करते हैं। तद्यथा- **''(इमम्) प्रत्यक्षम् (जीवेभ्यः) प्राणाधारकेभ्यः स्थावरशरीरेभ्यश्च (परिधिम्) मर्यादाम् (दधामि) व्यवस्थापयामि...।''**

घ- इदं जनासो विदथ महद् ब्रह्म वदिष्यति।
न तत् पृथिव्यां नो दिवि येन प्राणन्ति वीरुधः।।
-अथर्व. १.३२.१

उपर्युद्धृत अथर्ववेदीय मन्त्र में वीरुध= लता, झाड़ी, वृक्ष आदि को प्राणधारण करने वाला कहा गया है। जीव शब्द 'जीव प्राणधारणे' (भ्वादि.) धातु से निष्पन्न होता है। प्राणधारण करना ही जीवन का लक्षण है। आचार्य सायण ने **''वीरुधः विरोहणशीलाश्च कौशिकेनोक्ताश्चित्त्याद्या अन्याश्चौषधयः प्राणन्ति जीवन्ति''** प्राणन्ति का अर्थ जीवन्ति किया है। अतः लता वृक्ष वनस्पति प्राण धारण करते हैं, अर्थात् जीवित रहते हैं।

५. क- महर्षि दयानन्द ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के पुनर्जन्म विषय में जीव के ओषधि आदि में जाने का वर्णन करते हैं। यजु. १९.४७ **'द्वे सृती अशृणवं...'** मन्त्र की व्याख्या

''यदा जीवः पूर्वः शरीरं त्यक्त्वा वायु जलौषध्यादिषु भ्रमित्वा पितृशरीरं मातृशरीरं वा प्रविश्य पुनर्जन्म प्राप्नोति, तदा स सशरीरो जीवो भवतीति विज्ञेयम्।''- पृ. २१५

ख- वृक्ष में जीव विषयक सत्यार्थप्रकाश का निम्न सन्दर्भ द्रष्टव्य है-

''प्रश्न- ईश्वर ने किन्हीं जीवों को मनुष्य जन्म, किन्हीं को सिंहादि क्रूर जन्म, किन्हीं को हरिण, गाय आदि पशु किन्हीं को वृक्षादि कृमि कीट पतंगादि जन्म दिये हैं, इससे परमात्मा में पक्षपात आता है।

उत्तर- पक्षपात नहीं आता, क्योंकि उन जीवों के पूर्व सृष्टि में किये हुए कर्मानुसार व्यवस्था करने से, जो कर्म के बिना जन्म देता तो पक्षपात आता।'' - समु. ८ पृ. १४७ (दयानन्द संस्थान दिल्ली संस्करण)।

उपर्युक्त सन्दर्भ सृष्ट्युत्पत्ति प्रकरण से उद्धृत है, इसमें सर्गादि में मनुष्य, पशु तथा वृक्षादि में उपलब्ध भिन्नता के आधार पर इनमें जीव के होने को लेकर ईश्वर में पक्षपात का आरोप कथन है। महर्षि स्पष्ट करते हैं कि इन भिन्न-भिन्न योनियों में जीव का जाना उसके पूर्वकृत कर्मानुसार है। अतः पक्षपात नहीं है। इससे स्पष्टतः प्रतीत होता है कि महर्षि को वृक्षादि में जीव की सत्ता स्वीकार है।

ग- महर्षि दयानन्द द्वारा मैडम ब्लैवेट्स्की को लिखे पत्र (यह पत्र संभवत जुलाई १८७९ में लिखा गया है, क्योंकि इसमें १३ जून १८७९ के लिखे पत्र की प्राप्ति का उल्लेख है।) का सम्बद्ध अंश निम्नवत् है-

''...जब पाप पुण्य बराबर होते हैं, तब मनुष्य का शरीर प्राप्त करता है। जब पाप अधिक और पुण्य कम होते हैं तो आत्मा निम्नयोनि वा स्थावर योनियों में जाता है। पाप अधिक होने से जीव निम्नकोटि के प्राणियों तथा वृक्षादिकों के शरीरों में कष्ट पाता है।'' - **महर्षि दयानन्द सरस्वती का महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार, पृ. २०७**

घ- धर्मसभा फर्रुखाबाद ने ६ अक्टूबर १८७९ को एक विज्ञापन द्वारा महर्षि से पच्चीस प्रश्न पूछे थे। इनमें से इक्कीसवां प्रश्न तथा महर्षि द्वारा प्रदत्त उसका उत्तर निम्न है-

इक्कीसवां प्रश्न- जीवात्मा संख्यात हैं वा असंख्यात? **कर्म से मनुष्य पशु अथवा वृक्ष आदि योनियों में उत्पन्न हो सकता है वा नहीं?**

उत्तर- ईश्वर के ज्ञान में जीव संख्यात और जीव के अल्पज्ञान में असंख्यात हैं। पाप अधिक करने से जीव, पशु, वृक्ष आदि योनियों में उत्पन्न होता है। - म.द.स. का महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार, पृ. २२०

उपर्युद्धृत वेदमन्त्रों, सांख्य सूत्र, छान्दोग्य उपनिषद्, मनुस्मृति तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, सत्यार्थप्रकाश एवं महर्षि के पत्र-व्यवहार से उद्धृत प्रमाणों के आधार पर वृक्ष भोगायतन (भोग योनि) हैं। जीव पूर्वकृत कर्मों के भोग हेतु वृक्ष-लता आदि की योनि को प्राप्त करता है।

आर्यजगत् के समाचार

१. रामनवमी मनाई- श्रीरामनवमी २५ मार्च २०१८ को मानसरोवर जयपुर के ओमानन्द परिसर में आर्यसमाज जयपुर-दक्षिण के तत्त्वावधान में श्रीराम जन्मदिवस के अवसर पर यज्ञ एवं प्रवचन आयोजित किये गये।

२. नव संवत्सर मनाया- १८ मार्च २०१८ को नव संवत्सर २०७५ वि. के प्रथम दिवस पर उपनगर नींदड आर्यसमाज में २१ कुण्डीय महायज्ञ सम्पन्न हुआ। यज्ञ डॉ. रामपाल विद्याभास्कर के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ।

३. बलिदान दिवस मनाया- २३ मार्च २०१८ को मानसरोवर के विजय पथ स्थित वैदिक महिला मण्डल, आर्यसमाज में क्रान्ति के महानायकों -भगतसिंह, राजगुरु तथा सुखदेव के बलिदान दिवस पर यज्ञ एवं श्रद्धाञ्जलि अर्पित करके उन्हें स्मरण किया गया।

४. नव संवत्सरेष्टि पर्व मनाया- १८ मार्च २०१८ को आर्यसमाज साँभर लेक के तत्त्वावधान में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा २०७५ वि. पर २७ कुण्डीय महायज्ञ सम्पन्न हुआ। यज्ञ में सान्निध्य एवं संरक्षण स्वामी ओमानन्द सरस्वती का रहा। यज्ञ का संचालन पुरोहित द्वय पं. रविदत्त मेद्यार्थी तथा दीपक शास्त्री के निर्देशन में हुआ।

५. यज्ञ सम्पन्न- नव संवत्सर के उपलक्ष्य में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, वैक्रमाब्द २०७५, रविवार १८ मार्च २०१८ को आर्यसमाज शृंगारनगर, लखनऊ द्वारा निकटवर्ती पार्क में १०१ कुण्डीय यज्ञ कराया गया। आचार्य रूपचन्द्र 'दीपक' सामूहिक यज्ञ के सञ्चालक और पं. गिरजेश कुमार सह-सञ्चालक रहे। प्रत्येक वर्ष की भाँति दो आर्य महिलाओं और दो पुरुषों को सम्मानित किया गया- १. स्वामी वीरेन्द्र परिव्राजक, डालीगंज, २. श्री अमृतप्रकाश , रायबरेली रोड, ३. श्रीमती उषा गुप्ता, सदर, ४. श्रीमती करुणा मोहन, लालबाग।

६. वार्षिकोत्सव- आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय आबूपर्वत का २८वाँ वार्षिकोत्सव १२, १३, १४ तदनुसार दिनांक २६ से २८ मई २०१८ को मनाया जा रहा है। त्रि-दिवसीय इस वार्षिकोत्सव में यज्ञ, भजन, वेदोपदेश तथा ब्रह्मचारियों द्वारा शास्त्रार्थ, व्याख्यान, व्यायामादि के प्रदर्शन-इत्यादि अनेक कार्यक्रम आयोजित होंगे।

वार्षिकोत्सव के इस कार्यक्रम में अनेक संत-महात्मा तथा विद्वज्जन पधारेंगे। आप अपने परिवार तथा इष्टमित्रों के साथ गुरुकुल में सादर आमन्त्रित हैं। ब्रह्मचारियों के तप तथा विद्याभ्यास की प्रगति का भी साक्षात्कार करें। **सम्पर्क**- ९४१४५८९५१०, ८००५९४०९४३, ८७६४२१८८८१

७. आवश्यकता- आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय आबूपर्वत (सम्बद्ध महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक, हरियाणा) में संस्कृत-साहित्य, हिन्दी, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, गणित आदि विषयों के अध्यापन हेतु अध्यापकों की आवश्यकता है। कृपया सेवानिवृत्त अध्यापक महानुभाव ही सम्पर्क करें। आवास, भोजन, गोदुग्ध की निःशुल्क व्यवस्था के साथ-साथ समुचित मानदेय भी दिया जाएगा। इच्छुक महानुभाव गुरुकुल के आगामी वार्षिकोत्सव पर दिनांक २६ से २८ मई को पधारें। **सम्पर्क**- ९४१४५८९५१०

८. अन्नप्राशन संस्कार सम्पन्न- आर्यसमाज मन्दिर, नेमदारगंज, (नवादा-बिहार)-की यज्ञशाला में हर्षवर्द्धन आर्य की प्रथम सन्तान एवं श्री सत्यदेवप्रसाद आर्य 'मरुत' जी की प्रथम सुपौत्री 'प्रियल वेदध्वनि' का अन्नप्राशन संस्कार १५ अप्रैल को प्रातः साप्ताहिक सत्संग के उपरान्त श्री सन्तशरण आर्य के पौरोहित्य में पारिवारिक जनों एवं गणमान्य सज्जनों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ।

९. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- दिनांक १५ से १८ मार्च २०१८ तक राष्ट्र रक्षा वैदिक महायज्ञ एवं वार्षिकोत्सव का श्रीमती दयाराम पोद्दार अष्टांग आयुर्वेद महाविद्यालय, कर्णगढ़ नाथनगर, भागलपुर के प्रांगण में आयोजन किया गया। वैदिक प्रवचनकर्त्ता आर्यनरेश, एवं भजनोपदेशक अजय आर्य, मेरठ के उपदेश हुए।

१०. शिविर का आयोजन- डॉ. अशोक कु. चौहान व श्रीमती पुष्पा भाटिया के सान्निध्य में केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के तत्त्वावधान में ९ से १७ जून २०१८ तक विशाल युवक चरित्र निर्माण व व्यक्तित्व विकास शिविर का आयोजन दयानन्द मॉडल स्कूल, बी ब्लॉक, विवेक विहार, दिल्ली-९५ (निकट मैट्रो स्टेशन झिलमिल व दिलशाद गार्डन) में किया जा रहा है। **सम्पर्क**- ९८१०११७४६४

चुनाव समाचार

११. आर्यसमाज सज्जन नगर, उदयपुर, राज. के चुनाव में **प्रधान**- श्री हुकमचन्द शास्त्री, **मन्त्री**- श्री हेमांग जोशी, **कोषाध्यक्ष**- श्री अशोक उदावत को चुना गया।

श्री जमनालाल एवं श्रीमती दुर्गा देवी, ब्यावर निवासी

जिन्होंने अपना व्यवसाय और घर बंद करके आर्यसमाज के ऐतिहासिक गोरक्षा एवं हिन्दी आन्दोलन में सपरिवार हिस्सा लिया और पूरा परिवार जेल में रहा। इसके कारण इनका व्यवसाय बंद हो गया और अपना घर बेचना पड़ा, लेकिन आर्यसमाज को नहीं छोड़ा। आपके सबसे छोटे पुत्र श्री प्रकाश आर्य वर्तमान में ब्यावर आर्यसमाज में सक्रिय हैं।

आर जे/ए जे/80/2018-2020 तक प्रेषण : ३०.अप्रैल , २०१८ आर.एन.आई. ३९५९/५९

आर्य मिशनरी, नेपाल आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान, 'आर्यावर्त' साप्ताहिक के संपादक

स्वामी भवानी दयाल संन्यासी

जन्म- १० सितम्बर १८९२ मृत्यु - ९ मई १९५०

परिचय- पृष्ठ सं. ३६ पर

प्रेषकः
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,